मूल्य १०/-

मान मन्दिर बरसाना

फाल्गुन-चैत्र, श्रीकृष्ण सं.५२४९, वि.सं. २०८० (मार्च २०२४ ई.), वर्ष ०८, अंक ०३

पूज्यश्री बाबा महाराज के पावन सानिध्य में भक्तजनों द्वारा बरसाना (ब्रह्माचल पर्वत) की परिक्रमा लगाई गई

अनुक्रमणिका

विषय- सूची — पृष्ठ- संख्या

१ 'होरी-लीला' की प्राकट्य-स्थली 'बरसाना'…….......०५
२ श्रीब्रजरसमय रंग-वर्षण 'होरीलीला-गान'..............०७
३ ब्रजभाव-भाविता 'श्रीयमुनाजी'............................१२
४ श्रीगह्वरवन के दिव्य दीपक 'पं. हरिश्चन्द्रजी'............१५
५ बाबाश्री के माता-पिता की गौभक्ति का वैभव 'श्रीमाताजी गौशाला'.१९
६ परम पूज्या श्रीदीदीजी का संक्षिप्त परिचय...............२२
७ परम उदार संत श्रीरामजीलाल शास्त्री...................२४
८ अलौकिक प्रतिभा स्वरूपा ब्रजबालिका 'मुरलिकाजी'...........२७
९ प्रमाद' से बचना ही वास्तविक भजन.....................२८
१० सेवा-प्रवृत्ति से सहज भोग-निवृत्ति.........................३१
११ नहिं ऐसो जनम बार-बार...................................३२

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो ।
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो ।
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो ।
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो ।
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो ।
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्यो ।

— *पूज्यश्री बाबामहाराज कृत*

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,

गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

mob. **राधाकांत शास्त्री** 9927338666

(Website :www.maanmandir.org)

(E-mail :info@maanmandir.org)

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८.०० से ९:३० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:३० से ८:०० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं ।

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले ।"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकालें व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवाद्रव्य किसी विश्वसनीय गौसेवा प्रकल्प को दान कर गौरक्षा कार्य में सहभागी बन अनन्त पुण्य का लाभ लें । हिन्दूशास्त्रों में अंशमात्र गौसेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है ।

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें । हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है – **सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ । जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ||** (श्रीमद्भागवत३/७/४१)
अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता ।

प्रकाशकीय

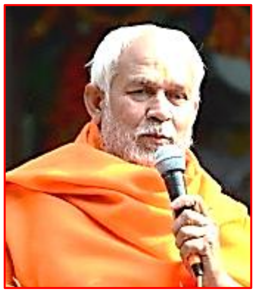

'भगवत्प्राप्ति' जो मनुष्य-जन्म की सबसे बड़ी उपलब्धि है परन्तु हो कैसे ? कोई भी प्राणी यह नहीं चाहता कि वह बार-बार अनन्त कष्ट पाता रहे, फिर भी पाता है क्योंकि वह जानते हुए भी कुछ कर नहीं पाता । साधन भी कष्ट-साध्य हैं और साधनों में रति भी नहीं हो पाती है; जो हमने बार-बार किया है, वही पुनः करने के लिए हम विवश रहते हैं ।

'भगवान्' को सभी शास्त्र, साधन व महापुरुष करुणावरुणालय कहते हैं, हैं भी तभी तो वे हमें बहुमूल्य मानव-देह प्रदान करते हैं । यह देवदुर्लभ मनुष्य का जन्म ही सर्वोत्कृष्ट जन्म है । भगवान् की इस महती अनुकम्पा को भी हम विस्मरण कर जन्म को निरर्थक बना देते हैं । अब प्रश्न यह होता है कि फिर किया क्या जाए ? कहते हैं कि जीव का स्वभाव चिपकने का है, वह कहीं न कहीं किसी वस्तु, स्थान व प्राणी में आसक्त होता है; बस, यही आसक्ति उसके उद्धार का कारण बन सकती है । किसी महापुरुष में आसक्त हो जाओ । जो आसक्ति बन्धन का हेतु है, वही तुम्हारे कल्याण का कारण बन जाएगी ।

प्रसङ्गमजरं पाशमात्मनः कवयो विदुः ।
स एव साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम् ॥ (श्रीभागवतजी ३/२५/२०)

यह अनुभूत सत्य है । श्रीमानमन्दिर पर विगत् ७२ वर्षों से अखण्ड ब्रजवास कर रहे ब्रज के परम विरक्त सन्त पद्मश्री पूज्य श्रीरमेशबाबाजी के पास हम जैसे सैकड़ों बालक-बालिकाएँ, नवयुवक व वृद्धजन अपने विविध स्वार्थों के साथ आये और शनैः-शनैः अपनी स्वार्थपरताओं को भूल सदा-सदा के लिए उन्हीं के होकर रह गये । जीवन परिवर्तित होता है । जो जहाँ रहता है, वहीं के वातावरण में रम जाता है । श्रीबाबा स्वयं में उच्च कोटि के विद्वान् हैं, भारत की विभूति हैं, परन्तु जैसे भगवान् श्रीकृष्ण ने गँवार बनकर ब्रज में गँवारों के साथ विविध लीलायें की, कहीं चोरी-लीला की तो कहीं चीरहरण अथवा कहीं ग्वालबालों के साथ विविध प्रकार के खेल खेले, गिरिराजधारण किया; इसी प्रकार श्रीबाबा भी ब्रजवासियों के साथ पक्के ब्रजवासी बन गये, उन्होंने ब्रजभूमि व ब्रजजनों को ही अपना आराध्य माना और वही शिक्षा उनके अनुयायियों को मिली । बाबाश्री के अनुसार भगवान् की लीलाओं को गाओ और भवसागर पार हो जाओ । आज सात-आठ दशक से हजारों भक्त भगवल्लीलाओं को गा रहे हैं और भगवान् की निकटता का अनुभव कर रहे हैं । वर्ष भर में कभी भगवान् की जन्म गाथा या गोचारण की गाथा या कन्दुक खेलन, इसी तरह होली लीला का गायन नित्य ही घण्टों चलता रहता है । अब बसन्त ऋतु का आगमन हो चुका है और महीने भर से अधिक होली गायन चलता रहेगा । ये सब लीलायें हमारे और भगवान् के मध्य की दूरी को अविलम्ब समाप्त कर देती हैं । जब श्रद्धालु जन भावविभोर होकर गाते हैं तो सब कुछ भूल जाते हैं और सदा-सदा के लिए प्रिया-प्रियतम के हो जाते हैं ।

'रसिया होरी में मेरे लग जाएगी, मत मारै दृगन की चोट ।'

ऐसी प्यारी-प्यारी कितनी ही होली लीलायें हैं, जिन्हें गाने से ऐसी रस की वर्षा होती है कि देवलोक के निवासी भी इस अवसर के लिए तड़पते होंगे ।

प्रबन्धक
राधाकान्त शास्त्री
श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

'होरी-लीला' की प्राकट्य-स्थली 'बरसाना'

होली का महोत्सव सम्पूर्ण भारतवर्ष में होता है, लेकिन इस परम पावनकारी पर्व का प्रारम्भ 'बरसाने' से होता है । ब्रज में भी सभी गाँवों में होली होती है; बरसाने में नवमी तिथि की 'रंगीली होरी' के बाद ही सब जगह शुरू होती है – दशमी को नंदगाँव में होती है, फिर एकादशी से पूर्णिमा तक वृन्दावन में होती है, उसके बाद द्वितीया को 'दाऊजी का होरंगा' होता है, उसी दिन राल-भदाल में व जतीपुरा में (गुलाल कुण्ड पर) भी होती है, तृतीया को आन्यौर में होती है, मुखराई में चरखुला नृत्य होता है । द्वितीया-तृतीया को बठैन-जाव में भी होती है, पंचमी को खायरे में होती है । इस तरह से सारे ब्रज में अलग-अलग तिथियों में होली का उत्सव होता रहता है । लेकिन नवमी से पहले कहीं नहीं होती है, सब होलियों का मूल 'बरसाना' है । ब्रज में अनेक तरह की होलियाँ होती हैं जो संसार में कहीं नहीं हैं । इससे पता चलता है कि सारे संसार में होली का प्रचलन 'ब्रज' से ही हुआ है और उसमें भी सभी होलियों का जनक 'बरसाना' है, जहाँ श्रीजी के द्वारा ही सभी विधाएँ प्रकट हुई हैं । 'बरसाना' में रंगीली होरी ५००० वर्ष से भी अधिक पुरानी है और इसका प्रमाण 'गर्गसंहिता' में है । ब्रज में नौ उपनन्द थे, जो सभी गुणों से युक्त व धनवान-शीलवान थे; इनके घर में देवों के वरदान से गोप-कन्यायें उत्पन्न हुईं, वे सभी राधारानी की सखियाँ अनुचरी थीं । एक समय बसंत ऋतु आयी, सभी ने होरी का उत्सव प्रारम्भ करना चाहा परन्तु होरी-उत्सव प्रारम्भ कैसे हो, श्रीजी तो 'मानलीला' में हैं । सब सखियाँ श्रीजी के पास जाती हैं और कहती हैं कि हे राधारानी ! हे चन्द्रबदने !! हे मधुमान करने वाली मानिनी !!! हमारी बात सुनो, यह होरी का उत्सव है, इस उत्सव को मनाने के लिये तुम्हारे कुल में ब्रज के भूषण नीलमणि नन्दलाल आये हुए हैं । श्यामसुन्दर की ऐसी शोभा है –**'श्रीयौवनोन्मद विघूर्णित .... स्वपदारुणेन'** (श्रीगर्गसंहिता, माधुर्यखण्ड -१२/८) "हे राधे ! यौवन की शोभा से ब्रजराज के नेत्र मद से झूम रहे हैं । घुँघराली, काली-काली लटूरियाँ उनके गोल-गोल कपोलों पर लटक रहीं हैं और उनकी लटूरियों की, उनके केशों की जो छटा है, उसका तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता । पीला जामा बड़ा घेरदार है और पाँवों में नूपुर छम-छम बज रहे हैं, बरसाने की ओर चले आ रहे हैं । यशोदाजी के द्वारा धारण कराया गया मुकुट सूर्य की तरह प्रकाशमान हो रहा है । कुण्डल ऐसे चमक रहे हैं जैसे बिजली चमक रही हो । उनके गले में बनमाला ऐसी लगती है जैसे बादल बिजली के साथ आ गए हों, उनका सारा शरीर लाल रंग से रँगा हुआ है और उनके हाथ में पिचकारी है । हे राधे ! वे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं ।" इस होरी को नन्ददासजी ने इस तरह से गाया है । राधारानी से सखियाँ कहती हैं कि हे राधे ! आज के दिन आप मान क्यों करती हैं ? मान छोड़कर चलिये होरी के मैदान में –

"अरी चल नवल किशोरी गोरी भोरी होरी खेलन जाँहि ।" (श्रृंगाररससागर)

कैसी सुन्दर चाँदनी रात है ! ऐसे में आपको कैसे घर में बैठना अच्छा लगता है ? हे राधे ! वहाँ हर गाँव के गोपी-ग्वालों के टोल जुड़ रहे हैं ।

उधर श्यामसुन्दर आये और उन्होंने देखा कि कोटि-कोटि गोपियाँ हैं किन्तु उनकी आँखें जिसे ढूँढ रही थीं, वे राधारानी वहाँ नहीं हैं । श्यामसुन्दर ने चारों ओर देखा पर श्रीजी नहीं थीं, नेत्र नीचे करके उदास हो गये । करोड़ों गोपियाँ हैं पर **राधारानी** नहीं हैं ।

श्यामसुन्दर ने विशाखाजी को आँखों से पूछा कि 'श्रीजी' कहाँ हैं ? विशाखा ने कहा – "श्रीजी नहीं आईं", संकेत कर दिया कि अभी जाओ, तो विशाखाजी जाकर श्रीजी से बोलीं - "अब आप देर मत करो । बरसाने में श्यामसुन्दर बन-ठन के आये हैं, अब तुम चलो ।" श्रीजी मुस्करा गयीं तो विशाखाजी समझ गयीं कि लाड़लीजी मान गयी हैं । विशाखाजी ने बाँह पकड़ कर उठा लिया कि अब चलो और श्रीजी का श्रृंगार किया । श्रीजी जब चलीं तो ऐसे चल रही हैं कि कमर में लचक आ रही है । उनका रूप ऐसे लगता है जैसे कि चमकती हुई ज्योति...जैसे हवा में दीपक की ज्योति छनछनाती है ... चलते समय एक लट 'श्रीजी' के गालों पे लटक आयी है और वो लट-लटक कर गालों में जो नासिका का मोती है, उस मोती में उलझ गयी । नन्ददासजी कहते हैं कि जैसे कोई मछली फाँसने

वाला पानी में काँटा डालता है तो काँटे के नीचे आटे की गोली लगा देता है और मछली उसमें फँस जाती है । वैसे ही श्रीजी की एक घुँघराली लट जो लटकी, वह तो काँटा थी, लट मोती में उलझ गयी तो मोती आटे का चारा थी और मछली फँस गयी ... मछली क्या थी ? श्यामसुन्दर का मन । चारों ओर सखियाँ और बीच में श्रीजी जा रही हैं तो ऐसा लगता है कि चारों ओर कुमुदनियाँ खिल रहीं हैं, एक चाँद जा रहा है, ये गौर चाँद 'राधारानी' हैं जो आज पैदल जा रहा है । वहाँ पर अब खेल शुरू हुआ, पहले तो गुलाल से खेल हुआ । गुलाल के खेल के बीच में से श्यामसुन्दर ने श्रीजी को धोखे से पिचकारी मार दी तो श्रीजी ने मान कर लिया कि गुलाल से खेल हो रहा था, तुम जब हारने लगे तो बेइमानी क्यों की ? हुआ ये कि श्रीजी ने मान कर लिया और खेल रुक गया । यह तो बड़ा गड़बड़ हो गया, सारा रस ही चला गया । ललिताजी के पास मुकद्दमा गया कि इसका फैसला क्या होगा ? तो ललिताजी ने कहा कि आप जो चाहो वह दण्ड इनको दे दो, इन्होंने बेइमानी तो की ही है । बोलीं कि क्या दण्ड दिया जाये ? अब क्या दण्ड हुआ, ये भी सुनिए । गुलाल का खेल तो बहुत हुआ । गुलाल के खेल में जब श्यामसुन्दर हारने लग गये तो उन्होंने सबकी दृष्टि बचाकर बेइमानी की और श्रीजी को पिचकारी मार दी । श्रीजी बहुत चतुर हैं, वे जानती हैं कि अगर ये हारेंगे तो कोई न कोई बेइमानी जरूर करेंगे तो जैसे ही उन्होंने पिचकारी मारी, श्रीजी ने बड़ी चतुरता से मुड़कर उस धार को बाँये हाथ से रोक दिया । मारी तो थी श्यामसुन्दर ने कि सारा ऊपर से नीचे तक तर-बतर कर देंगे पर श्रीजी भी बड़ी खिलाड़ हैं । सारी धारा को अपने हाथ से रोक दिया पर फिर भी कुछ छींटे उनके गौर कपोलों पर आकर लग गये तो वह इतना अच्छा लग रहा था कि आप लोगों को हम क्या उपमा दें ? जैसे अमरूद पर लाल-लाल छींटें जब पड़ जाते हैं तो बहुत अच्छे लगते हैं । वह इतनी अच्छी लगीं कि श्यामसुन्दर का होरी का खेल रुक गया और श्रीजी के पास आकर वे उन छींटों को देखने लग गये । ऐसी शोभा हुई उनकी कि खेल ही रुक गया । श्यामसुन्दर समझ गये कि श्रीजी जरूर मान में हैं । बोले कि चलो फिर से खेलें । जब श्यामसुन्दर विनती करते हैं तो श्रीजी बोलीं कि जाओ, तुम बेइमान हो । सब सखियाँ इकट्ठी हो गयीं और मुकद्दमा पुनः ललिताजी के पास गया । ललिताजी ने कहा कि इन्हें हम यह दण्ड देती हैं कि इनकी आँखों में काजल लगा दिया जाय । होरी में यह बहुत बड़ा दण्ड है । होरी का काजल ऐसे नहीं होता । होरी का काजल गाढ़ा पोता जाता है । सखियाँ बोलीं – "मंजूर है दोनों को ?" यह बदला रस भरा है । श्रीजी ने दोनों हाथों की उँगलियों में काजल लिया । एक उँगली से नहीं, दोनों उँगली से काजल लिया । एक हाथ से उनका हाथ पकड़ लिया कि कोई गड़बड़ न करें और दूसरे हाथ से काजल ले, उनके नेत्रों को देख रही हैं । वे भी देख रहे हैं कि जल्दी से काजल लगाएँ । जैसे ही वह काजल का हाथ लेकर जाती हैं तो वह गाल हटा देते हैं । झगड़ा बढ़ा, खींचातानी में श्रीजी ने अपनी बाँयी भुजा से उनको ऐसे कस लिया कि उनकी गर्दन हिल नहीं पायी और काजल लगा दिया । यह लीला उसी दिन बरसाने में हुई । उसी के अंत में लिखते हैं कि श्रीकृष्ण को श्रीराधारानी के हाथों से जब काजल लग गया तो अपना पटका राधारानी को भेंट करके अपने घर चले गये । जो हार जाता है, वह पटका भेंट करता है । यह होरी-लीला 'गर्गसंहिता' में वर्णित है । ये होरी-उत्सव की परम्परा आज तक बरसाने में चलती आ रही है, जो बरसाने में पाण्डे-लीला से प्रारम्भ होती है ।

गोपियों द्वारा पाठ किये गये कवच में कहा गया है – 'सर्वग्रहभयङ्करः' *(श्रीभागवतजी - १०/६/२६)* ***'भगवान् सभी ग्रहों के लिए भयंकर हैं, उनका नाम रक्षा करे ।' वे भगवान् तभी रक्षा करेंगे, जब हम उनका नाम लेंगे, चाहे शनि चढ़े, चाहे राहु चढ़े, चाहे केतु चढ़े । ये नौ ग्रह हैं जो हमेशा मनुष्य के ऊपर चढ़ते-उतरते रहते हैं । इनसे रक्षा का उपाय एकमात्र भगवन्नाम है । वैष्णवों को चाहिए कि ग्रहों की बाधा से बचने के लिए भगवन्नाम के अतिरिक्त दूसरे साधनों के चक्कर में न पड़े ।***

श्रीब्रजरसमय रंग-वर्षण 'होरीलीला-गान'

श्रीबाबामहाराज द्वारा होरी-पदगान (फरवरी-मार्च-अप्रैल २०१८) से संकलित

गाली की पृथा केवल ब्रज में ही नहीं है।श्रीमद्भागवत में भी उल्लेख है कि गोपियों ने भी कृष्ण के लिए 'कितव' शब्द का प्रयोग किया।'कितव' का अर्थ होता है – धूर्त।

"कितव योषितः कस्त्यजेन्निशि" (श्रीमद्भागवतजी १०/३१/१६) इसी प्रकार गोपियों ने कृष्ण को 'कुहक (कपटी) भी कहा है – **"कुहक नो मनः क्षोभयन्ति हि"** (श्रीमद्भागवतजी १०/३१/१०)

हे कपटी ! तेरी हँसी हमारे मन में क्षोभ उत्पन्न कर देती है।इस प्रकार यह गाली की पृथा ब्रज में प्राचीनकाल से चली आई है और तो क्या शंकरजी भी गाली देते हैं।'गोपालसहस्त्रनाम' में उन्होंने श्रीकृष्ण को 'चौरजारशिखामणि' कहा है; ऐसा बड़ा चोर आज तक कोई हुआ नहीं, ऐसा जार पुरुष आज तक कोई नहीं हुआ; यह गाली ब्रज की शोभा है ॥ रंगीली होली के दिन बरसाने में जब नंदगाँव के गोस्वामी लोग आते हैं तो उस समय गाली गाई जाती है और उस गाली की हर कड़ी पर नंदगाँव के ग्वालबाल वाह-वाह करते हैं अर्थात् प्रसन्न होते हैं।ऐसा नहीं कि जवाब दें कि गाली क्यों दे रहे हो।बरसाने वाले नंदगाँव वालों को इस प्रकार गाली देते हैं -

"तेरी माँय यशोदारानी, काऊ कारे से रति मानी"।

इसको सुनकर नंदगाँव वाले 'वाह ! वाह !!' करते हैं, इसके बाद बरसाने वाले कहते हैं –

"नन्दनंदन तेरी बुआ, करै झूठ के पुआ"

"नन्दनंदन तेरी ताई, वाकी सब कोऊ करैं बड़ाई"

इस प्रकार बरसाने वाले कृष्ण के पूरे कुनबा को गाली देते हैं – **"नंदगाँव के ग्वाला, बरसाने के लाला गठजोर बाँध कराओ ।"** इन गालियों के जवाब में नंदगाँव वाले प्रसन्नता से 'वाह ! वाह !!' ही कहते हैं; यह गाली की प्रथा अब तक चली आ रही है, हजारों वर्ष व्यतीत होने के बावजूद भी।रामायण के अनुसार शिवजी के विवाह में भी गाली गायी गई, उस गाली को सुनने के लिए देवता लोग जान-बूझकर बैठे रहते हैं, देर करते हैं ताकि और गाली मिले; इस प्रकार वे गाली का आनंद लेते हैं।

यह गाली ब्रज की प्रथा होने के साथ-साथ सारे संसार की भी प्रथा है।देवताओं के समाज तक में गाली की प्रथा है।शंकर जी के विवाह में देवताओं के समाज में गाली का आदान-प्रदान हुआ था।गोपियों की गाली सुनकर श्यामसुन्दर जान बूझकर क्रोध दिखाते हैं, केवल ऊपरी क्रोध दिखाते हैं, वास्तव में क्रोधित नहीं होते हैं।गोपियों को धमकी देते है ।

"तेरे गुलचा गाल जमाय दूँगो, क्यों चोर कहे तू मोते" ।

'मुझे तू चोर कहेगी, झूठा चोरी का आरोप लगाएगी तो तेरे गाल पर गुलचा लगा दूँगा ।' गोपी भी श्यामसुंदर द्वारा गुलचा लगाए जाने पर और अधिक गाली देगी, इससे और अधिक आनंद आएगा, इसलिए ब्रज की गाली तो स्वयं भगवान् भी सुनना अत्यधिक पसंद करते हैं।

हमलोग भी जो ब्रज में रह रहे हैं या ब्रज में जो लोग आते हैं, उन्हें शिक्षा लेना चाहिए –

"औगुन अनेक भरे तऊ ब्रजवासी हैं"

ब्रजवासीयों में यदि अनेक अवगुण दिखाई पड़ता है तब भी ब्रजवासियों में श्रद्धा रखना चाहिए।ऐसी श्रद्धा रखना ही ब्रजभक्ति है।(**७ अप्रैल २०१८ के पदगान से**)

"शेष महेश आदिहु अज अजहू पछताय"

शेष भगवान्, इन्द्र महादेव जी और ब्रह्मादि पछताते हैं कि यदि हम ब्रज में होते तो ग्वालबालों के साथ, गोपियों के साथ होली खेलते ।

"सो रस रमा तनक नहीं चाख्यो,
जदपि पलोटत पांय" ।

ब्रज की होली का रस लक्ष्मीजी को नहीं मिला यद्यपि वह दिन-रात भगवान् के चरण दबाती हैं लेकिन यह होली उनको नहीं मिली, किसको इसकी प्राप्ति होती है –

"श्रीवृषभानुसुता पद-अम्बुज जिनके सदा सहाय"

जिनके ऊपर राधारानी की कृपा हो गयी है ।

यह कृष्ण के विरह का गीत है।गोपियाँ कहती हैं कि श्यामसुंदर अभी तक नहीं आये।ये सब गीत हम (बाबाश्री) सुनते थे, जब से हम ब्रज में आये हैं, इन गीतों को सुन रहे हैं।ब्रजवासी इन गीतों को गाते हैं, महापुरुषों ने भी इन्हें

गाया है।इन सब रसों का समूह (झुण्ड) ही 'रास' है । अगर बहुत से रस न हों तो रास नहीं बनेगा । मिलन-विरह, 'विरह-मिलन' यही सब मिलकर 'महारास' होता है ।

(५ फरवरी २०१८)

श्रीमद्भागवत में इस ब्रजरस का वर्णन किया गया -

गोपीभिः स्तोभितोऽनृत्यद् भगवान् बालवत् क्वचित् ।
उद्गायति क्वचिन्मुग्धस्तद्वशो दारुयन्त्रवत् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/११/०७)

गोपियाँ लालच देकर 'बालकृष्ण' को नचाती थीं । रसखानजी ने भी गाया है – **"ताहि अहीर की छोहरियाँ,**
छछिया भर छाछ पर नाच नचावैं ।"

इन सब लीलाओं का विस्तार होरी में होता है।कठपुतली की तरह गोपियों के सामने भगवान् गाते हैं, नाचते हैं ।

"बिभर्ति कचिदाज्ञप्त: पीठकोन्मानपादुकम् ।"

'कृष्ण' गोपियों की दासता करते हैं, उनके बैठने के लिए पीढ़ा लाते हैं, उनकी पनहियाँ (पादुकाएँ, जूती) सिर पर रखकर लाते हैं; यही सब क्रिया ठाकुरजी होली में भी करते हैं । इसलिए इस 'रस' को समझना बहुत कठिन है; जिस पर राधारानी की दया होती है, वही इसे समझता है, वही इस होली के रस को लेता है । **(६ फ़रवरी २०१८)**

जब हम (पूज्य बाबाश्री) ब्रज में आये तो सुन रखा था कि बरसाने की होली नामी है।बरसाने की होली हमने देखी, इसके बाद नंदगाँव की होली देखी।नंदगाँव के बाद जाव-बठैन की होली देखी । जाव-बठैन के बाद मुखराई की प्रसिद्ध 'चरखुला होली' देखी।वहाँ के बाद आन्यौर की 'नचनी होली' देखी।'जतीपुरा की होली' भी आन्यौर के साथ की है, वह भी देखी।दाऊजी का हुरंगा देखा।राल-भदार में भी 'झंडी की लड़ाई' देखी । जाव-बठैन में 'झामें की लड़ाई' होती है । जिस गाँव में जाओ, उसी गाँव में अलग ढंग की होली होती है । इन्हें देखकर समझ में आया कि भागवत में जो लिखा है –

पुण्या बत व्रजभुवो यदयं नृलिङ्ग-
गूढः पुराणपुरुषो वनचित्रमाल्यः ।
गाः पालयन् सहबलः क्वणयंश्च वेणुं
विक्रीदयाञ्चति गिरित्ररमार्चिताङ्घ्रिः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/४४/१३)

'ब्रजभुवो' इसमें 'भुवो' बहुवचन में कहा गया है अर्थात् ब्रज की भूमियाँ, जिस गाँव में जाओ, वही अलग तरह की होली होती है।

हर जगह श्यामसुन्दर मनुष्य रूप से स्वयं खेलते हैं।जबकि ये सबसे पुराने 'आदि पुरुष' हैं।अनेक प्रकार के फूलों की मालाएं पहन करके, गायों की रक्षा करते हुए वंशी बजाते हुए, दाऊ जी को साथ लेकर क्रीड़ा करते हैं; ये वही पुरुष हैं, जिनकी स्तुति महादेवजी करते हैं, लक्ष्मी जी जिनकी सेवा करती हैं, वे ही पुराणपुरुष यहाँ ब्रजभूमि में होली खेल रहे हैं। **(८ फरवरी २०१८)**

गोपियाँ गाती हैं –

हे री मेरो श्याम भ्रमर मन लै गयो ।
मेरे नैनन में मँड़राय ॥

यह श्यामसुंदर ऐसा रसिया है कि सदा मेरी आँखों में मँडराता रहता है।

पनिया भरन मैं घर से निकसी,
मेरे बाँय बोल्यो आय ॥

ऐसा यह चतुर रसिया है कि इसे ढूँढना नहीं पड़ता, तैयार खड़ा रहता है।

इस गीत के भाव को समझना चाहिए, फिर गाना चाहिए; गोपीजन आगे कहती हैं - **"भर-भर देय उचाय"** ऐसा रसिया है कि गोपियों की सेवा करता है, भर-भरके जल से भरी गगरी उचाता है; ये है होली का रस, जैसा कि श्रीमद्भागवत में लिखा है –

"बिभर्ति क्वचिदाज्ञप्त: पीठिकोन्मानपादुकम्"

'कृष्ण' गोपियों की आज्ञा मानते हैं; ऐसा प्रेमी आज तक कोई नहीं हुआ।गोपियों की पनहियाँ (जूती या चप्पल) कृष्ण अपने सिर पर पर रखकर लाते हैं; ऐसा सेवक दुनिया में और कौन होगा।इसीलिए भागवत में वर्णन है कि श्रीकृष्ण के मथुरा-गमन पर मथुरा की नारियों ने यही कहा – श्लोक-(१०/४४/१३) यह ब्रज की भूमि 'पुण्य' है, क्यों पुण्य है ? क्योंकि यहाँ सर्वशक्तिमान भगवान् नरलीला कर रहा है, मनुष्य बनके, छिपके वह यहाँ खेल खेल रहा है; कैसे खेल खेलता है ?

एवं निगूढात्मगतिः स्वमायया गोपात्मजत्वं चरितैर्विडम्बयन् । रेमे रमालालितपादपल्लवो ग्राम्यैः समं ग्राम्यवदीशचेष्टितः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/१५/१९)

'ग्राम्य' गँवार बन जाता है जबकि वह ईश्वर है लेकिन ब्रज में गँवार बनकर खेल रहा है।इसीलिए श्लोक (१०/४४/१३) में 'बत' शब्द का प्रयोग हुआ है।आश्चर्य है कि यह वही भूमि है, जहाँ पर भगवान् गोपरूप धारण करके ऐसे खेल खेलता रहता है, जिसके चरणों की पूजा महालक्ष्मी और महादेव किया करते हैं, वह यहाँ ब्रज में गँवार बनके क्रीडा करता है।ब्रज में जो होली मनाई जाती है, वह साधारण होली नहीं है, बड़े-बड़े महापुरुषों ने ब्रज की होरी के लीला-पद लिखे हैं, गँवारपन-लीला के पदों की रचना की है; इसको समझो और फिर गाओ।

मथुरावासी कृष्ण के बारे में कहते हैं कि यह पुराणपुरुष है अर्थात् अनादिकाल से सबसे पुराना पुरुष है, इसका ब्रजभूमि में दर्शन होता है, यह भगवान् है, सबसे बड़ा महापुरुष है, इसके पहले कोई नहीं हुआ।ब्रजभूमि में यह वन के फूलों की माला पहनकर खेल खेलता है, गायों को चराता है, वंशी बजाते हुए, यह वही भगवान् है जिसके लिए महालक्ष्मी और महादेवजी भी तरसते हैं, उसकी पूजा करते हैं; वही भगवान् गँवार बनकर ब्रज में खेलता है।(**९ फरवरी २०१८**) ब्रज की होली के गीत बड़े रसीले हैं।लोग इन्हें गा लेते हैं लेकिन इनका अर्थ नहीं समझते।'रस' को समझना भी चाहिए।'ब्रजगोपी' श्यामसुंदर को समझा रही हैं –

"बिहारी छाड़ दै होरी में मोसों बुरी हँसन की बान"

हे बिहारीजी ! ये हँसने की तुम्हारी आदत बहुत बुरी है, इसको छोड़ दो क्योंकि

"या ब्रज घर-घर मेरी तोरी करत कुचर्चा कान" तू जो मेरी ओर देखकर हँसता है, घर-घर ब्रजवासियों के बीच, इस बात की कुचर्चा हो रही है, घर-घर बात फ़ैल गयी है और इसका बवंडर मच गया है ।

"औरन की तो कहा परेखो, घर के करत गुमान"

और बाहर वालों की तो क्या कहूँ, घर के ही गुमान करते हैं कि हमारी घर की लाज जाती है और तुम तो डरते नहीं हो।**"तुम तो छैल बिदित या जग में तुम्हरी नहीं कछु हानि"** तुमको सारे ब्रज में या संसार में सब जानते हैं।महादेवजी ने तुम्हारे बारे में कहा है कि तुम जैसा चोर आज तक नहीं हुआ, तुम जैसा जार पुरुष आज तक नहीं हुआ; 'चौरजारशिखामणि' हो तुम।इसलिए तुम संसार में विदित हो।हे कान्हा ! तेरा तो कोई नुक्सान नहीं है।

"निशिदिन सासुल डाँटे हमको"

मेरी सास रोज मुझे डाँटती है और मुझे अपने कुल की कानि (लज्जा) रखनी है।

"जरै रीति या ब्रज की अनोखी"

इस ब्रज की रीति में आग लग जाए।लोगों के ताने सुन-सुनकर मैं हैरान हो गया हूँ।होरी में कोई मर्यादा नहीं है।ये जो ब्रज की रीति है –

"नागरिदास जो बादरफा है वा दिन की मुस्कान"

उस दिन तुम होली खेलते समय मुस्कुरा गए थे, उस हँसी का फल है कि बादल फट गया, चारों ओर कुचर्चा हो रही है । इसलिए हे बिहारी ! तुम अपनी इस आदत को छोड़ दो । **(१० फरवरी २०१८)**

होली लीला का वर्णन बड़े-बड़े महापुरुषों ने किया है।जैसे एक होली-लीला में गाया गया है –

"चढ़ के नन्दगाँव पे आई होली बरसाने वाली"

बरसाने की गोपियों ने नंदगाँव पर धावा बोला, नंदगाँव घेर लिया और नन्दभवन में पहुँच गयी।श्यामसुंदर ने देखा कि टोल की टोल गोपियाँ आई हैं।ये पकड़ लेंगी तो मेरी गति बिगाड़ देंगी।कोई गुलचा मारेगी, इसलिए श्यामसुंदर भाग गए और नन्दभवन के ऊपर चित्रहारी पर चढ़ गए।गोपियाँ गई और उन्हें ढूँढने लगीं किन्तु नहीं मिले।गोपियाँ पहुँच गयीं और यशोदा मैया को घेर लिया, बोलीं - मैया ! तेरा लाला कहाँ है बता? मैया ने सोचा कि इन्हें नहीं बताउंगी तो मुझे परेशान करेंगी, इसीलिए उन्हें आँखों के इशारे से बता दिया कि ऊपर चित्रसारी पर जाकर देखो।सब गोपियाँ ऊपर चढ़ गयीं और वहां नंदलाला को पकड़ लिया।पकड़ कर खूब होली खेली और वहां से नीचे सखी बनाकर लायीं और यशोदा मैया की गोद में बिठा दिया और बोलीं – मैया ! फागुन का महीना हैं, तेरे लाला के लिए हम दुल्हिन लायीं हैं।देख ले, कैसी सुन्दर बहू है; ऐसा कहकर श्यामसुंदर रूपी सखी को मैया की गोद में बिठा दिया और हास-परिहास करने लग गयीं।

होरी लीला साल भर बहुत प्रतीक्षा के बाद मिलती है ।

सखी भागन ते फागुन आयो,
होरी खेलूंगी श्याम संग जाय।

बड़े भाग्य से फागुन आता है।इस होरी-लीला की प्रशंसा की गयी है भागवत में – (श्लोक-१०/४४/१३)
मथुरा की नारियां कहती हैं – ब्रजभूमि पुण्य शालिनी है, इससे अधिक पुण्यधाम दुनिया में न कोई था, न है, न होगा ।
(१२ फरवरी २०१८)

भागवत जी में एक श्लोक है इस होली के रस, ब्रजरस के बारे में और गोपियों के स्वरूप के बारे में।

क्वेमाः स्त्रियो वनचरीर्व्यभिचारदुष्टाः
कृष्णे क्व चैष परमात्मनि रूढभावः ।
नन्वीश्वरोऽनुभजतोऽविदुषोऽपि साक्षा-
च्छ्रेयस्तनोत्यगदराज इवोपयुक्तः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/४७/५९)

कहाँ तो ये गाँव की स्त्रियाँ, वनचरी, वनों में घूमने वाली, जंगल में रहने वाली जंगली, जिनके अन्दर कोई आचरण नहीं है, व्यभिचार से दूषित हैं।'व्यभिचार' माने स्नान व कर्मकांड आदि की 'शुद्धि' कुछ नहीं जानती हैं और इतने पर भी भगवान् कृष्ण में इनका रूढभाव हो गया, जो कभी हट नहीं सकता।ऐसा भाव बिना विशेष कृपा के नहीं होता है तो इतनी कृपा इन पर कैसे हो गयी।क्योंकि इनमें कोई सदाचार है नहीं, व्यभिचार है, दूषित हैं; फिर कैसे इन पर कृपा हो गयी; इसका उत्तर देते हैं -

"नन्वीश्वरोऽनुभजतोऽविदुषोऽपि साक्षात्" – 'श्रीभगवान्' का जो बार-बार भजन करता है, भले ही वह विद्वान् नहीं है, कुछ जानता नहीं हैं लेकिन अखंड स्मरण करता है, उसका भगवान् साक्षात् कल्याण करते हैं।जैसे अमृत चाहे गुस्से में पी लो, चाहे अश्रद्धा से पी लो, वह पीने वाले को अमर कर देगा।ऐसे ही 'भगवान्' का स्मरण काम से, क्रोध से, लोभ से, मोह से, कैसे भी कर लो; वह कल्याण ही कर देगा।श्लोक- (भागवत ७/१/३०)
गोपियों ने कामभाव से भगवान् की प्राप्ति किया, कंस ने भय से उनकी प्राप्ति की, शिशुपाल आदि ने द्वेष से भगवान् को प्राप्त किया, परिवार के स्नेह-सम्बन्ध से 'कृष्णवंशियों' ने भगवान् की प्राप्ति किया, पांडवजनों ने भक्ति से प्राप्त किया।इसलिए भगवान् का स्मरण कोई कैसे भी करता है, चाहे कामभाव से, चाहे क्रोधभाव से, चाहे सदाचार से, व्यभिचार से तो एकदिन 'भगवान्' उसका कल्याण ही करता है।आज जो लोग लोभ-लालच से मंदिरों में भगवान् का भजन कर रहे हैं, उनका भी कल्याण होगा।चार साल तक हमने होली-लीला नहीं गवाई यह सोचकर कि यह श्रृंगार-रस की लीला है, इससे बच्चों में श्रृंगार-रस के संस्कार पड़ेंगे; फिर हमने ये सब बंधन छोड़ दिए यही सब श्लोक पढ़ करके कि भगवान् की याद कैसे भी कर लो चाहे काम से, क्रोध से लेकिन करो, बार-बार याद करो; अपनी निष्ठा मत छोड़ो।इसीलिए इस वर्ष हमने होली- लीला गाने की छुट्टी दे दी - खूब गाओ, किसी भाव से गाओ।जैसे एक होली लीला है –

"नन्द के मोहे गैल चलत गाली दयी
मोहे आवत अचंभो तोय ।"

गाली देना तो प्राकृत भाव है, अत्यधिक प्राकृत, गँवार लोग गाली देते हैं लेकिन यहाँ ब्रज में 'श्यामसुंदर' गाली दे रहे हैं तो गोपी कहती है – मुझे आश्चर्य हो रहा है कि तू नन्द का लाला, इतने बड़े घर का होकर गाली दे रहा है ।

"सबरी दई भिजोय"

तूने मुझे रंग में पूरा भिगो दिया ।

इसलिए होली के बहाने होली खेलने के बहाने गाँव के गंवार लोग ठाकुरजी की याद करते हैं तो इन सबका कल्याण होता है । **(११ फरवरी २०१८)**

शिवरात्रि (भोला चतुर्दशी) के दिन महादेवजी की भी होली लीला हो गई - **सदाशिव खेलत होली ।**

सौ मन भाँग मांगे हिमांचल घोर धतूर-धतूरी,
कालकूट और जहर संखिया आगे भाँग धरो री ।
कहें शिव भाँग है थोरी ॥

सौ मन भाँग, कालकूट जहर और संखिया तथा आक, धतूरा हिमाचलजी ने रख दिया, फिर भी शिवजी कहते हैं कि 'भाँग' बढ़िया नहीं रही। महादेवजी के प्रसंग में यह होरी-लीला गाई गई क्योंकि कालकूट जहर आदि का उनका भोग लगता है।कृष्णरस में तो कहना ही क्या शुरू से आखिर तक रस बहता रहता है।
गोपियाँ कहती हैं – **छैला मेरी जोट मिलाय लीजो।**
जो छैला मोहि पतरी जानै, कांटे पे तुलवाय लीजो ।
ये सब रसीली होलियाँ हैं जो ब्रज में गाई जाती हैं।इसीलिए भागवत में कहा गया है – श्लोक-(१०/४४/१३)
ब्रजभूमि धन्य है, यहाँ मनुष्य रूप में 'भगवान्' खेल खेलता है, गीत गाता है।**(१३ फरवरी २०१८)**

होली में जो हारता है, वह फगुआ देता है।अधिकतर ठाकुरजी हारते हैं और जब फगुआ देते हैं तब छूटते हैं।फगुआ में वस्त्र आभूषण लहंगा-फरिया, गहने-नथ-कौंधनी आदि दिए जाते हैं।कभी-कभी यशोदा मैया आती हैं अपने लाला को छुड़ाने।जैसा कि होली-लीला में गाया गया – "यशोदा मैया आवेगी, फगुआ देगी तब छोड़ेंगे कन्हैया को ।" इस तरह से होरी की हार-जीत की लड़ाई होती है।रंगीली होरी में भी लठिया मारी जाती है हार-जीत का फैसला करने के लिए; इसी का नाम होरी है।होरी में दो टोल हैं – सखियों के, सखाओं के।टोल बनाकर ये लड़ते हैं, युद्ध करते हैं और जो हारता है वह फगुआ देता हैं; ऐसा खेल ठाकुरजी ने ब्रज में खेला।जिस भूमि में हम लोग बैठे हैं यह वही रसमयी खेलनभूमि है।**(१४ फरवरी २०१८)**

होरीलीला में परमेश्वर का नखरा झड़ गया।

परमेश्वर को झरयो नखरो ।

इसी बात को भागवत में लिखा है –

पुण्या बत ब्रजभुवो.......(१०/४४/१३)

भागवत में श्रीकृष्ण को पुराणपुरुष कहा गया है।जबसे सृष्टि चली है तबसे यही एक पुराण पुरुष हैं और इनसे पहले कोई पुरुष नहीं था; इसीलिए वेदों में पुरुषसूक्त बनाया गया।श्रीकृष्ण के अवतरण से ब्रजभूमि परम पुण्यमय बन गयी।करोड़ों लोग आज भी ब्रज का दर्शन करने आते हैं क्योंकि यह पुण्यमयी भूमि है।यहाँ मनुष्य के रूप में पुराणपुरुष आया है होली खेलने और उस पुराणपुरुष की गोपियों ने यह गति की कि सखी रूप बनाकर उसका सब नखरा झाड़ दिया।वह ब्रज में गायें चराता है, दाऊजी को साथ लेकर खेलता है, वंशी बजाता रहता है, यह वही पुरुष है जिसकी पूजा महादेव जी और महालक्ष्मी आदि किया करते हैं और पूजा ठीक से कर भी नहीं पाते हैं, उस परमेश्वर का ब्रज में सब नखरा झड़ गया।**(२८ फरवरी २०१८)**

भगवान् की लीलाओं को प्राकृत नहीं समझना चाहिए।ब्रज में भगवान् ने गँवार लीला किया।ठाकुरजी ने स्वयं यहाँ ऐसे गोपी-ग्वालों के साथ रसमय खेल खेले; वही परंपरा आज भी चली आ रही है।भागवत में कहा गया है – (श्लोक-६/८/२८) भगवान् के नामों को गाओ, रूप व गुणों को गाओ, लीलाओं को गाओ; इनके गाने से समस्त अमंगल व भय नष्ट हो जाते हैं।इस श्लोक का वर्णन वृत्तासुर के प्रसंग में उनके छोटे भाई के वध हेतु नारायण कवच के प्रयोग में किया गया है।नारायण कवच में भगवान् के अस्त्रों का वर्णन है।सुदर्शन चक्र, कौमोद की गदा आदि का वर्णन है।सारे कवच में इन्हीं का उद्देश्य किया गया है, उसमें लीला का वर्णन नहीं किया गया है।केवल भगवान् के अस्त्रों का वर्णन किया गया है।वहाँ लिखा है कि भगवान् के अस्त्रों की महिमा गाओ, रूप का गान करो, लीलागान करो, गुणगान करो; उससे 'कल्याण मार्ग की समस्त बाधाएँ', सभी पापों का अपराध नष्ट हो जाता है।इसीलिए हमलोग लीलागान के साथ ही भगवान् के नाम-रूप-गुण आदि का गान करते हैं; इससे हमारे समस्त अशुभ नष्ट हो जाते हैं, अनेकों तपस्याओं का, वेद पढ़ने का, यज्ञ करने का दान करने का फल यही है कि उत्तम श्लोक भगवान् की लीलाओं और उनके गुणों का गान किया जाए; इससे ऊँचा कोई साधन नहीं है । इसलिए खुलकर ठाकुरजी की होली-लीला आदि का गान करना चाहिए; ब्रजभूमि में श्रीठाकुरजी ने गँवार लीलाएँ की हैं, जो अत्यंत पवित्र और परम कल्याणकारी हैं ।

(१ मार्च २०१८)

गौ–सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का Account number

दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA, GAHVARVAN,BARSANA, MATHURA

Bank – Axis Bank Ltd , A/C – 915010000494364

IFSC – UTIB0001058 BRANCH – KOSI KALAN,

MOB. NO. – 9927916699

ब्रजभाव-भाविता 'श्रीयमुनाजी'

बाबाश्री के सत्संग 'राधासुधानिधि' (९/६/२००३) से संकलित

जिस प्रकार अंशिनी श्रीराधिका के गोपीगण, महिषीगण, लक्ष्मीगण इत्यादि गण हैं; ये सब राधिका ही हैं, उनके अनेक रूप हैं, जिसमें ऐश्वर्य रूप का विकास हो गया वे लक्ष्मीगण हैं । वैसे ही यमुनाजी के भी अनेक रूप हैं –

(१) नित्य रसवाहिनी यमुना हैं, जहाँ शुद्ध रूप से लाल-लाड़ली क्रीडा करते हैं । सनत्कुमारसंहिता में नित्य धाम वाली यमुना का वर्णन मिलता है –

युवयोर्वक्त्र संजाताः केलिश्रम कणाः शुभाः ।
अतः संजायते नूनं तटजा कापि चोत्तमा ॥
सर्वैः सखीगणैः पेयं त्वं प्रसीद कुरुष्व च ।
इदमेव परं पुण्यं युवयोः केलिजलं शुभम् ।
तस्यास्तद् वाक्यमाकर्ण्य सा चकार नदीं परम् ॥

(सनत्कुमारसंहिता)

श्रीसनत्कुमारजी ने बताया है कि यमुनाजी क्या हैं, इनका प्राकट्य कैसे हुआ है ?

नित्यधाम में श्रीराधारानी और श्रीकृष्ण लीलाविहार कर रहे थे तो दोनों के मुख पर लीलादृष्टि से श्रमकेलि के कण (बिंदु) आये अर्थात् इस श्रम से जो दिव्य रसमय स्वेदों (पसीने की बूँदों) की उत्पत्ति हुई, उन कणों के दर्शन से सखीगणों को अद्भुत रस की अनुभूति हुई (दर्शनमात्र से अनिर्वचनीय आनन्द मिला) । सखियों ने कहा कि आप दोनों के मुख से परम पवित्र (मंगलकारी) श्रमकेलि-कण उत्पन्न हुए हैं, अतः कोई उत्तम नदी अवश्य इस रूप में आयी है, अब उसका रूप आप प्रकट करिए क्योंकि अनन्त की तो एक कणिका भी अनन्त होती है । आप हम सब पर प्रसन्न होकर इनको जल रूप प्रदान करें, ये सबसे पवित्र जल होगा जो आपकी केलि से उत्पन्न हुआ है । जब श्रीजी ने देखा कि ललिताजी के साथ सभी सहचरियाँ प्रार्थना कर रही हैं तो उन्होंने अपने ललाट (माथे) की बूँदों से यमुना बना दिया । यही नित्यधाम (गोलोक) की यमुनाजी धराधाम पर भी अवतरित होती हैं ।

(२) रस रूपा श्रीयमुनाजी वृन्दावन धाम में बहती हैं जो नित्य धाम से आयी हैं ।

(३) यूथेश्वरी रूप से श्रीयमुनाजी रास में जाती हैं ।

(४) समुद्र-पत्नी 'नदी' रूपा श्रीयमुनाजी का दाऊजी ने आकर्षण किया था –

श्रीकालिन्द्या एव संज्ञा छायान्यायेन तच्छाया विभूतिरूपा भगवत एव महाविभूतेः समुद्रस्य भार्य्यास्वरूपा मूर्त्तिरेका ज्ञेया तथाच तत्रैव प्रत्युवाचार्णववधूमिति तां प्रति सम्बोधनं च सागराङ्गने इति ।

(श्रीजीवगोस्वामी कृत वैष्णवतोषिणी टीका भागवत १०/६५/२४)

रामस्तु यमुनामाह स्नातुमिच्छे महानदि ।
एहि मामभिगच्छ त्वं रूपिणी सागरंगमे ॥

(श्रीहरिवंशपुराण, विष्णुपर्व – ४६/३०)

(५) जब यमुनाजी यहाँ अवतार लेती हैं कलिन्दगिरि से प्रकट होकर के, जो सूर्य की पुत्री व कृष्ण की पटरानी बनती हैं । इस प्रसंग को समझने के लिए इसके पूर्व की संक्षिप्त कथा बता रहे हैं कि त्वष्टा की पुत्री संज्ञा से सूर्य का विवाह हुआ था, उनसे तीन संतानें उत्पन्न होती हैं – वैवस्वत मनु, यमराज और यमुना । 'संज्ञा' सूर्य के तेज को सह नहीं पाईं, वे अपनी छाया (प्रतिरूप) स्थापित करके तपस्या करने चली गयीं, सूर्यदेव समझ नहीं पाए । वैवस्वत मनु, यमराज और यमुना की सौतेली माँ (संज्ञा की छाया) ने तीनों पुत्रों का अपमान किया अर्थात् उनसे द्वेषपूर्ण व्यवहार किया, जिससे यमराज को गुस्सा आया और अपनी सौतेली माँ को मारने के लिए पाद-प्रहार किया तो उस (छाया) ने श्राप दे दिया कि तेरा पैर टूटकर गिर जाए, जब ये श्राप सूर्य को सुनाई दिया तो वे सोचने लगे कि अरे ! ऐसा तो कोई माँ नहीं कर सकती । 'सूर्यदेव' उसके बाल पकड़कर बोले कि तू कौन है ? इसकी माँ तो है नहीं ...सही बता ?

तब उसने कहा कि मैं संज्ञा की छाया हूँ, संज्ञा तो घोड़ी का रूप बनाकर के तप करने गयी हैं ।

तब सूर्य विचार करने लगे कि सौतेली माँ ही ऐसा दुष्कृत्य कर सकती है, फिर उन्होंने अपने पुत्र यमराज से कहा कि तुम्हारा टाँग तो नहीं टूटेगा, केवल शरीर का एक बाल (रोम) गिर जाएगा जिससे इस (सौतेली माँ) की भी बात व्यर्थ नहीं होगी और तुम्हारा भी कुछ नुक्सान नहीं होगा । बाद में छाया से भी चार सन्तानें उत्पन्न हो जाती हैं –

१.सावर्णी मनु, २. शनैश्चर (शनिदेव) ३. तप्ती (जिसका संवरण से विवाह हुआ था, महाभारत में कथा है ।) ४. वृष्टि (भद्रा) । इसके उपरान्त 'सूर्यदेव' घोड़ी के रूप में तप करती हुई 'संज्ञा' की याद में घोड़ा बनकर वहाँ पहुँच गये, दोनों का परस्पर मिलन हुआ है; सूर्य के तेज को संज्ञा सह नहीं पाई और उन्होंने नाक से उसे फेंक दिया जिससे २ अश्विनी कुमार हुए हैं; सूर्य के एक पुत्र अश्वों के अधिपति 'रैवत' भी हुए हैं । इस प्रकार से सूर्य की १० संतानें उत्पन्न हुई हैं, जिसमें एक संतान यमुनाजी हैं, इसलिए इन्हें सूर्य-पुत्री कहते हैं ।

एक बार कृष्ण अर्जुन के साथ भ्रमण कर रहे थे तो उन्होंने देखा कि यमुना-तट पर कोई एक तपस्विनी तप कर रही है । श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि अर्जुन ! तुम देखो, ये कौन तपस्विनी है ? ऐसा लगता है कि ये चिरकाल से कोई पिपासा लेकर तप कर रही है ।

श्यामसुन्दर जानते तो थे ही कि मेरी प्राप्ति के लिए तप कर रही है लेकिन अर्जुन को उस साधिका का परिचय पूछने के लिए उसके पास भेजा क्योंकि सच्चे प्रेम में छिपाव होता है – **सर्व ढके सोहत नहीं, उघरे होत कुवेष ।**
अर्ध ढके सोहत सदा, कवि अक्षर कुच केश ॥

'श्रृंगार-रस' जब पूर्ण रूप से लज्जाहीन (अनावृत) हो जाता है तो पशुवृत्ति का है, वह रसाभास बन जाता है, उसको रस के विवेचकों (साहित्यकारों) ने रस नहीं माना है; जब उसमें लज्जा आदि उचित उदात्त नायिकाओं के गुण होते हैं, तब ही वह रस बनता है ।

अर्जुन उस तपरत आराधिका का परिचय पूछने जाते हैं । उस तपाराधिका की बड़ी सुन्दर कान्ति है, नील विग्रह है; आराधना से एक बड़ी सुन्दर नीली कान्ति का विस्तार हो रहा है, शान्त मुद्रा में हैं । (ये जब से सूर्य-पुत्री बनी थी, तभी से कृष्ण-प्राप्ति के लिए तप कर रही थीं । जब लीलादृष्टि से यमुनाजी संसार में आने के लिए सूर्य से प्रकट हुई थीं तो उन्होंने अपने पिता से कहा कि मेरे पति तो कृष्ण ही हैं, इसलिए उनके पिता सूर्यदेव ने कृष्ण की प्राप्ति के लिए आराधना हेतु एक भवन पहले से आयी हुई श्रीयमुनाजी में बनवा दिया था, उसी में तपस्या कर रही थीं ।) अर्जुन पूछते हैं कि हे देवी ! आप कौन हैं ? तब सूर्य-पुत्री यमुनाजी कहती हैं – **कालिन्दीति समाख्याता वसामि यमुना जले ।**
निर्मिते भवने पित्रा यावदच्युत दर्शनम् ॥

(श्रीभागवतजी १०/५८/२२)

"हे अर्जुन ! मेरा नाम कालिन्दी है, मैं इसी यमुनाजी के पानी में रहती हूँ (अर्थात् श्रीयमुनाजी का प्रवाह पहले से आ रहा है, उसमें कलिन्दगिरितनया का प्रवाह मिल गया; इसकी कथाएँ पुराणों में वर्णित हैं ।) हमारे पिता सूर्य ने यमुनाजल के भीतर एक रत्नमय महल बनवाया है कृष्ण की प्राप्ति के लिए । मैं तब से ही यहीं पर श्रीकृष्ण की प्राप्ति के लिए आराधना कर रही हूँ, जब तक श्रीकृष्ण नहीं मिलेंगे तब तक मेरा तप चलता रहेगा ।" अर्जुन समझ गए और जाकर के कृष्ण को बताया, तब 'कृष्ण' कालिन्दी (यमुना) का वरण कर अपनी पटरानी बनाते हैं । जिस यमुनाजल में सूर्यदेव ने अपनी पुत्री यमुना के लिए भवन बनवाया था, उन यमुनाजी का नित्य धाम से अवतरण होता है, जो कृष्णपटरानी (यमुना) से भी बहुत पहले से प्रवाहित हो रही हैं ।

एक बार अयोध्या के सूर्यवंशी राजा मान्धाता वृन्दावन में यमुनाजी के तट पर स्थित सौभरि ऋषि के आश्रम पर गये । उन्होंने ऋषि से प्रार्थना करते हुए कहा कि मुझे कोई ऐसा उत्तम साधन बताइए, जिससे इस लोक में सम्पूर्ण सिद्धियों से सम्पन्न मेरा राज्य बना रहे और परलोक में श्रीकृष्ण का सारूप्य अर्थात् भगवान् श्रीकृष्ण के नित्य धाम (गोलोक) की प्राप्ति हो । उस समय सौभरि ऋषि ने कहा कि मैं तुम्हारे सामने यमुनाजी के पञ्चाङ्ग का वर्णन करूँगा, जो सदा समस्त सिद्धियों को देने वाला है । यह साधन जहाँ से सूर्य का उदय होता है और जहाँ वह अस्त भाव को प्राप्त होता है, वहाँ तक के राज्य की प्राप्ति कराने वाला तथा भगवान् श्रीकृष्ण को वश में करने वाला है ।

यदुवंशियों के आचार्य एवं भगवान् श्रीकृष्ण का नामकरण संस्कार करने वाले श्रीगर्गमुनि द्वारा रचित ग्रन्थ गर्ग संहिता के माधुर्य खण्ड में सौभरि ऋषि ने राजा मान्धाता को अध्याय १६ से अध्याय १९ तक यमुना पञ्चाङ्ग के अन्तर्गत श्रीयमुना कवच, श्री यमुनाजी का स्तोत्र, यमुनाजी के जप, पटल और पद्धति का वर्णन तथा यमुना सहस्रनाम का विस्तार से वर्णन किया है । श्रीयमुना कवच का उपदेश करते हुए सौभरि मुनि ने कहा –

यमुनायाश्च कवचं सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।

चतुष्पदार्थदं साक्षाच्छृणु राजन् महामते ॥

यमुनाजी का कवच मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला तथा साक्षात् चारों पदार्थों को देने वाला है, तुम इसे सुनो । कवच का उपदेश करके फिर इसकी फलश्रुति में सौभरि मुनि ने कहा –

इदं श्रीयमुनायाश्च कवचं परमाद्भुतम् ।
दशवारं पठेद् भक्त्या निर्धनो धनवान् भवेत् ॥
त्रिभिर्मासैः पठेद् धीमान् ब्रह्मचारी मिताशनः ।
सर्वराज्याधिपत्यत्वं प्राप्यते नात्र संशयः ॥

यह श्रीयमुनाजी का परम अद्भुत कवच है । जो भक्तिभाव से दस बार इसका पाठ करता है, वह निर्धन भी धनवान हो जाता है । जो बुद्धिमान मनुष्य ब्रह्मचर्य के पालनपूर्वक परिमित आहार का सेवन करते हुए तीन मास तक इसका पाठ करेगा, वह सम्पूर्ण राज्यों का आधिपत्य प्राप्त कर लेगा, इसमें संशय नहीं है । जो तीन महीने की अवधि तक प्रतिदिन भक्तिभाव से शुद्धचित्त हो इसका एक सौ दस बार पाठ करेगा, उसको क्या-क्या नहीं मिल जाएगा ? इसी प्रकार यमुनाजी के सहस्रनाम का वर्णन कीर्ति देने वाला तथा सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला है । यह बड़े-बड़े पापों को हर लेता, पुण्य देता और आयु को बढ़ाने वाला श्रेष्ठ साधन है । रात में एक बार इसका पाठ कर ले तो चोरों से भय नहीं रहता, रास्ते में दो बार पढ़ ले तो डाकू, लुटेरों - हत्यारों से कोई भय नहीं रह जाता है । इसके पाठ से चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) की कामनायें पूरी होती हैं । क्षत्रिय अर्थात् शासक वर्ग पृथ्वी का आधिपत्य प्राप्त करता है तथा वैश्य या व्यापारी वर्ग खजाने का मालिक होता है । सबके अन्त में सौभरि ऋषि ने कहा कि जो लोग एक वर्ष तक पटल और पद्धति की विधि का पालन करके प्रतिदिन यमुना सहस्रनाम का सौ बार पाठ करते हैं और उसके बाद यमुना स्तोत्र एवं यमुना कवच पढ़ते हैं, वे सातों द्वीपों से युक्त पृथ्वी का राज्य प्राप्त कर लेंगे, इसमें संशय नहीं है । जो यमुनाजी में भक्तिभाव रखकर निष्काम भाव से इसका पाठ करता है, वह पुण्यात्मा धर्म-अर्थ-काम तीनों को पाकर इस जीवन में ही जीवन्मुक्त हो जाता है । द्वितीया से पूर्णिमा तिथि तक प्रतिदिन कालिन्दी देवी (यमुनाजी) का ध्यान करके भक्तिभाव से दस बार यमुना सहस्रनाम का पाठ करने वाला यदि रोगी है तो रोग से छूट जाता है, कैद में पड़ा हो तो वहाँ के बन्धन से मुक्त हो जाता है, गर्भिणी नारी हो तो वह पुत्र पैदा करती है और विद्यार्थी हो तो वह पण्डित (श्रेष्ठ विद्वान) होता है । मोहन, स्तम्भन, वशीकरण, उच्चाटन, मारण, शोषण, दीपन, उन्मादन, तापन, निधि दर्शन आदि जो-जो वस्तु मनुष्य मन में चाहता है, उस-उसको वह प्राप्त कर लेता है ।

श्रीवाराहपुराण में साक्षात् वराह भगवान् ने पृथ्वी देवी से कहा है –

गंगा शतगुणा प्रोक्ता माथुरे मम मण्डले ।
यमुना विश्रुता देवी नात्र कार्या विचारिणा ॥

(वाराहपुराण १५०/३०)

यमुनाजी की महिमा गंगाजी से सैकड़ों गुना अधिक है । इस सन्दर्भ में किसी प्रकार का विचार अर्थात् सन्देह नहीं करना चाहिए । गंगाजी का प्रादुर्भाव तो श्रीकृष्ण के चरणकमलों से हुआ परन्तु यमुनाजी तो श्रीकृष्ण के वामांग से उत्पन्न हुई हैं और गोलोक धाम से यमुनाजी ही गंगाजी को पृथ्वी पर लायी हैं । स्वयं गंगाजी ने यमुनाजी की प्रशंसा करते हुए उन्हें अपने से अधिक महिमशालिनी बताया है । इसका विस्तृत प्रमाण "यमुनाजी का गोलोक से अवतरण" नामक गर्ग संहिता के श्रीवृन्दावन खण्ड के अध्याय तीन में उपलब्ध है । मानव समाज की सर्वविध समृद्धि के लिए पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश रूप प्रकृति का शुद्ध व संरक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है ।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार सीताजी ने अपने पातिव्रत की रक्षा के लिए श्रीयमुना का पूजन किया और यमुना की स्तुति करते हुए कहा – 'हे यमुने ! इक्ष्वाकु की पवित्र नगरी अयोध्या में चौदह वर्ष के वनवास के पश्चात् मेरे स्वामी श्रीराम यदि सुरक्षित लौट आयेंगे तो मैं सहस्रों गायों व सुरा (देव दुर्लभ पेय) से आपकी पूजा करूँगी ।'

कालिन्दी मध्यमायाता सीतात्वेनामवन्दत्
स्वस्ति देवि तरामि त्वं पारयन्मे पातिव्रतम् ।
यक्ष्ये त्वां गो सहस्रेण सुराघटशतेन च
स्वस्ति प्रत्यागते राम पुरीभिक्ष्वाकु पालिताम् ॥

(वाल्मीकि रामायण)

यमुना पूजन से श्रीराम की वनवास यात्रा को अत्यन्त सफल देखकर सीताजी ने पुनः श्रीवृन्दावन के निकट अशोक वन में आकर श्रीयमुना पूजन किया, जिससे श्रीराम

एक सफल राज्य संचालक हुए एवं "राम राज्य" की प्रशस्ति चहुँ ओर फ़ैल गयी ।

विलोक्य दूषितां कृष्णां कृष्णः कृष्णाहिना विभुः ।
तस्या विशुद्धमन्विच्छन् सर्पं तमुदवासयत् ॥

(श्रीभागवतजी १०/१६/१)

जिस समय भगवान् श्रीकृष्ण ने देखा कि श्रीयमुनाजी के विषैले (दूषित) जल से चराचर जीव-जन्तु, गौवंश, गोपीजन-ग्वालवाल व समस्त ब्रजवासियों का जीवन-यापन दुस्कर (अत्यन्त कठिन) हो गया है तो स्वयं श्यामसुन्दर ने यमुनाजल को शुद्ध करने के लिए कालियनाग (भयंकर जहरीले सर्प) को वहाँ से निकाल दिया । श्रीयमुनामहारानी की इस सेवा (शुद्धिकरण कर वास्तविक स्वरूप में लाने) के कार्य को साक्षात् श्रीकृष्ण ने स्वयं करके हम लोगों को बहुत बड़ी शिक्षा दी है कि ये ब्रज की सबसे बड़ी व प्राथमिक सेवा है ।

वर्तमान में इस श्रीकृष्ण-शिक्षा का पालन करना हम सभी भक्तजनों का परम कर्त्तव्य है । श्रीयमुना-सेवा (यमुनाजी को वास्तविक स्वरूप में लाने) के इस अनुपम-अलौकिक कार्य को करने वाला श्रीयमुनाजी व श्रीराधामाधव का विशेष कृपाभाजन बनता है, जिससे उस यमुना-सेवक की सभी मनोकामनाएँ सहज ही सम्पूर्ण हो जाती हैं ।

श्रीगह्वरवन के दिव्य दीपक 'पं. हरिश्चन्द्रजी'

बरसाना में श्रीजी के करकमलों द्वारा निर्मित उनकी विहार-वाटिका गह्वरवन में निवास करने वाले बहुत बड़े महापुरुष थे पंडित हरिश्चंद्र जी, जिनकी सेवा से इसी वन के महात्मा मौनी बाबा सिद्ध हुए थे । पंडित हरिश्चन्द्रजी इनसे पहले से गह्वरवन में रहते थे और मौनी बाबा ने आकर पंडितजी की सेवा किया था । उसी सेवा के प्रताप से वह इतने बड़े संत बने कि उनके शरीर से अग्नि का प्राकट्य हुआ और उन्हें पता भी नहीं चला । पंडितजी के पास हम (श्री बाबा महाराज) एक साल तक गए हैं सत्संग करने, वो बड़े सेवा निष्ठ थे । उनके पास कोई जा नहीं सकता था । सिर्फ दस मिनट के लिए हमको उन्होंने अनुमति दिया था । हमने उनसे कहा था कि बाबा ! हम आपकी सेवा चाहते हैं । वह हँस गए, बहुत बूढ़े थे । बोले - तुम क्या करोगे, हमें तो सेवा की जरूरत है नहीं ।' उनका भोजन बनके आता था एक ब्रजवासी के यहाँ से, उसी को खा लेते थे दोपहर में और बर्तन मांजते थे, कटोरा धोने के लिए कुण्ड में उतरते थे, उसी समय हमको उनका दर्शन होता था । हम चाहते थे कि किसी तरह हम उनके पास पहुँचें । वो सारी रात जागते थे । हम कुण्ड के उस पार से देखते थे कि उनकी कुटिया में दीपक जल रहा है, उस समय बिजली नहीं थी, केवल दीपक जला करता था । एक दिन हमने पूछा कि बाबा आप सारी रात जागते हो तो वे बोले – 'हाँ ।' हमने कहा – 'हम आपकी सेवा करना चाहते हैं ।' तो कहने लगे – 'हमको जरूरत नहीं है । भोजन आता है, दो रोटियाँ कोई ब्रजवासी दे देता है, उतनी देर के लिए किवाड़ खुलती है और उसके बाद तो हमारी किवाड़ बंद रहती है ।' तो हमने कहा कि कुछ तो हमें आप सेवा बताओ तो वह बोले – 'तुम एक काम कर सकते हो - अंगीठी में राख भरी जाती है, तुम राख फेंक करके कोयला भर देना, इतनी देर के लिए आ सकते हो ।' (वो बहुत वृद्ध थे तो सारी रात अंगीठी में हाथ सेंकते रहते थे ।) हमने कहा – 'ठीक है ।' हमने सोचा कि इतनी देर के लिए जाना पड़े तो भगवान् की कृपा है, संतों का दर्शन ही मुश्किल है । अतः हम संध्या को जाते थे, उनकी अंगीठी में से राख खाली करके कोयला भर देते थे । वह बहुत वृद्ध थे किन्तु उनकी निष्ठा ऐसी थी कि शौच करने गह्वर वन में नहीं जाते थे, दोहनी कुण्ड की ओर जाते थे । उनको संग्रहड़ी का रोग था, कई बार शौच जाना पड़ता था, हाथ काँपता रहता था । जाड़े में रात भर अंगीठी के पास हाथ सेंकते रहते थे । अंगीठी में कोयला डालने का काम उन्होंने हमें दिया था । हमारा इतना प्रेम और श्रद्धा थी पंडितजी में कि जब उनका शरीर छूटा, उनका दाहसंस्कार हुआ था दोहनी कुण्ड पर, हम बहुत दिनों तक वहाँ जाते रहे और रोते रहे । जबकि हमारे पिताजी का जब शरीर छूटा था तब हम नहीं रोये थे ।

जब हम ब्रज में नये-नये आये थे तो एकबार किसी महात्मा के पास गये थे, वो बड़े भजनानंदी थे, सारी रात भजन करते

थे । हम गये उनके पास, श्रद्धा से प्रणाम किया । वो बोले – 'कैसे आये हो ?' हमने कहा – 'महाराज ! भजन कैसे किया जाता है, आप हमको बताओ ।' तो उन्होंने कहा – 'तुम सारी रात जप करो, ये शरीर भजन के लिए मिला है, भजन करो नहीं तो प्राण छोड़ दो ।' हम वहाँ से आये और सीधे पंडितजी के पास हमने कहा – 'बाबा आज हमने एक दिव्य महापुरुष को देखा । हमने पंडित जी से सब बताया तो उन्होंने कहा कि अब तुम कभी मत जाना वहाँ, हमने कहा - क्यों ? वे बोले जिसमे कर्तृत्व है, वह भजन नहीं है । तुम सारी रात भजन करोगे तो कर्तृत्व पैदा होगा । तुम हमारी बात मानो, कभी मत जाना उनके पास, तो हम कभी नहीं गये । फिर उन्होंने वल्लभाचार्यजी का मत सुनाया कि जीव को जो कुछ मिलता है वह सेवा से मिलता है । जो भजन करते हैं और भजन करने का बल रखते हैं उनको कुछ नहीं मिलता । पंडित जी वल्लभकुल के वैष्णव थे । ऐसे महापुरुष जिनकी कृपा भी हमको थोड़ी मिली थी । उनके पास हम जाते थे अंगीठी में कोयला भरने और उस अंगीठी में जो राख थी उसको फेंक देते थे और उसको कोयले से भर देते थे, वे सारी रात उसको तापते थे । उनकी कुटिया के भीतर एक कमरा और था, उसमे कभी - कभी वे जाते थे और चले आते थे । हमने एक दिन देखा वह भीतर कमरे में हैं, वहाँ कुछ नहीं था । हमने सोचा था ठाकुर जी होंगे, सेवा होगी, प्रणाम करने जाते होंगे । वहाँ कुछ नहीं मिला तो हमने पूछ लिया – 'बाबा ! वहाँ आप जाते हैं, किस लिए जाते है ?' वे गंभीर हो गए और बोले –'तुम क्या समझते हो ?' हमने कहा कि ठाकुर जी होंगे आप प्रणाम करने जाते होंगे । उन्होंने कहा – 'ठीक समझा तुमने, हम केवल प्रणाम करने जाते हैं।' हमने कहा - कोई चित्र या विग्रह ठाकुरजी का तो है नहीं, आप किसको प्रणाम करते हैं ? तो वो बोले - हमारी कोई गुप्त बातें है, तुम पूछते हो तो हम बताते हैं । हमारे यहाँ इस कमरे में बहुत दिन पहले हमारे गुरुदेव आये थे और उनके साथ उनकी स्त्री गोसांइनजी भी थीं । वे आये थे अतः यहाँ कुछ दिन रुकेगें तो हमने अपनी कोठरी खाली कर दिया । इनकी इच्छा भई है तो हम कमरा खाली करके चले गए । वो और उनकी स्त्री यहाँ रुके, उसके बाद जब वो चले गए तो हम कमरे में घुसे तब वहां गुसांइनजी की टूटी-फूटी चूड़ियाँ मिली, हमने उनको रख लिया, वही चूड़ियों के टुकड़े हैं जिनको हम दंडवत करने जाते हैं, उनको हमने आले में रख लिया । हम (श्री बाबा महाराज) समझ गए, इनका इतना भाव है । पंडितजी बोले कि वह साक्षात्स्वामिनीजी (श्रीजी) थीं जो चूड़ियों के टुकड़े देने के लिए गह्वर वन आईं थीं । हमारे यहाँ आचार्य को भगवान् माना जाता है, उनकी अर्धांगिनी को स्वामिनीजी माना जाता है । अतः जब स्वामिनी जी गईं तो इन टुकड़ों को छोड़ गयीं, तब से मैं इनकी आराधना करता हूँ ।

इस कोटि के महापुरुष थे वे और उनकी सेवा से ही मौनी बाबा सिद्ध बने । उनको संग्रहणी रोग था फिर भी उन्होंने कभी औषधि नहीं ली, बोले – 'हमको इस रोग से फायदा है, हम सारी रात जाग लेते हैं । ये बीमारी न होती तो शायद न जागते ।' उनको एक टॉर्च की जरुरत थी । उन्होंने कहा - तुम हमको कोई टॉर्च ला सकते हो, हमने कहा कैसी टॉर्च चाहते हैं आप । उस जमाने में प्लास्टिक की जो टॉर्च चलती थीं वो जल्दी ख़राब हो जाती थीं । बांसठ साल पुरानी बात है, उस ज़माने में पीतल की जो पुरानी टॉर्च चलती थी, वो बंद हो गई थी । प्लास्टिक की चलने लग गई थी, तो वो बोले – 'कहीं से तुम हमको पीतल की टॉर्च लाओ, जिसका स्विच नहीं बिगड़ता है ।' हम यहाँ से गए, सारे वृन्दावन में ढूँढा, मथुरा में खोज की लेकिन पीतल की टॉर्च नहीं मिली और हम सोच बैठे थे कि जब तक नहीं मिलेगी, वापस नही आयेंगे । गोवर्धन में किसी पुरानी दुकान पर वो टॉर्च मिल गई । उसको लेकर हम आये । हमने उनको टॉर्च लाके दिया तो वे बड़े खुश भये और बोले –'तुम क्या चाहते हो ?' हमने कहा कि गहवर वन का वास चाहिए । वे बोले – 'ठीक है मिल गया तुमको ।' ये उनका आशीर्वाद था । तब से हम गह्वरवन में ही हैं । इसका वास हमको मिला उन्हीं के आशीर्वाद से, सिर्फ एक टॉर्च की सेवा से ।

पंडितजी सारी रात जागते हुए अपनी खिड़की पर बैठकर गहवर वन की लताओं-कुंजों को निहारा करते थे । एक बार मैंने पूछा कि आप सारी रात जागकर इन लताओं को क्यों देखा करते हैं ? उन्होंने उत्तर दिया – 'गहवरवन को राधारानी ने अपने हाथों से स्वयं बनाया है । आज भी राधारानी यहाँ लीला किया करती हैं, मैं इसी भाव से रात-

रात भर इन लताओं को निहारता हूँ कि कब श्रीजी इन लताओं से प्रगट होकर दर्शन देंगी ।'

उनके रात्रि जागरण के सम्बन्ध में मैंने एक बार जिज्ञासा की तो उन्होंने उत्तर दिया था कि मेरे पिताजी किसी राजा के गुरुदेव थे । राजा साहब भक्त थे और मेरे पिता जी का बहुत सम्मान करते थे । वह रात भर सोते नहीं थे और अपनी महल की छत पर टहला करते थे । एक बार मैं उनके पास रात को पहुँच गया, गुरुपुत्र होने के कारण पहरेदारों ने मुझे रोका नहीं और मैं सीधे राजा साहब की छत पर पहुँच गया । राजा साहब ने पूछा कि आप यहाँ कैसे आये तो मैंने कहा आप रात भर सोते नहीं हैं, जागते रहते हैं, इसका कारण जानने के लिए मैं आपके पास आया हूँ । राजा साहब ने मेरी तीव्र उत्कंठा को देखकर कहा कि आज तक किसी और को मैंने यह रहस्य नहीं बताया किन्तु आप मेरे गुरुपुत्र हो, इसलिए आपको बताता हूँ – रात भर मैं छत से आकाश में नक्षत्र-मण्डल को देखता रहता हूँ , आसमान में अनन्त तारे हैं, आकाश गंगा में कितने लोक हैं इनकी कोई गणना आज तक नहीं कर पाया, इसको देखकर मैं भगवान् के अद्भुत ऐश्वर्य और कालशक्ति का चिन्तन करता हूँ कि मनुष्य-जीवन क्षणभंगुर है, सिर पर हर समय काल सवार है, पता नहीं कब इस जीवन का अन्त हो जाय । इसलिए मैं रात भर जागकर ईश्वर-स्मरण करता रहता हूँ ।

पंडित जी बोले कि राजा साहब के जीवन की इस घटना से मुझे बहुत बड़ी शिक्षा मिली, इसलिए मैं भी गहवरवन में सारी रात जागकर यहाँ की लताओं को निहारते हुए श्रीजी का चिन्तन करता रहता हूँ । उन्होंने यह भी कहा था कि मुझे बहुत सी सिद्धियाँ भी प्राप्त थीं लेकिन यहाँ आकर मैंने उन्हें राधा सरोवर (गहवर-कुण्ड) में प्रवाहित कर दिया । कभी-कभी स्थानीय ब्रजवासी उनसे कहते थे कि बाबा ! मेरी भैंस खो गई है । पंडित जी कहते थे कि चिन्ता मत करो, भैंस मिल जाएगी और उनके आश्वासन से ब्रजवासियों को खोई भैंस पुनः मिल जाती थी । एकबार भारत वर्ष के प्रसिद्ध विद्वान पंडितजी के पास सत्संग हेतु पधारे । ब्रज में उद्धव-गोपी संवाद के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि जब उद्धव जी गोपियों के सामने ज्ञान और योग की चर्चा करने लगे तो गोपियों ने कृष्ण-प्रेम की महिमा का बखान करते हुए उनके सामने ऐसे तर्क प्रस्तुत किये कि उद्धव जी गोपियों के प्रति नतमस्तक हो गये और विधाता से उनकी चरण-रज प्राप्ति की प्रार्थना करने लगे । उन विद्वान की इस बात को सुनकर पंडित जी बोले – 'गोपियों ने कोई तर्क प्रस्तुत नहीं किये थे, उद्धवजी ने गोपियों की सर्वोच्चतम प्रेमावस्था का जो अवलोकन किया था, उसी का यह प्रभाव था कि वे अपने ज्ञान-गर्व को खंडित कर बैठे और ब्रज की लता-औषधि, वनस्पति बनकर उनकी चरणरज-प्राप्ति की आकांक्षा करने लगे –

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ।
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ॥

(श्रीभागवतजी १०/४७/६१)

"महारासकाल में जब ब्रजगोपियों के मध्य से श्रीश्यामसुन्दर अन्तर्धान हो गये तब गोपीजन कृष्ण-विरह में लता-पता, पशु-पक्षी, पेड़-पौधों आदि से श्रीकृष्ण को पूछती-पुकारती हुई वन-वनान्तरों में भटक रहीं थीं ।" गोपियों की इस भाव-स्थिति को पंडितजी महाराज ने एक पद-रचना में लिखा है –

रंगी त्रिभंगि श्याम के अपांग रंग ध्यान में, विचित्त पूछती फिरैं द्रुमान सों छपान में,
वियोग वह्नि सों भरी घरी उठैं उफान में ।
पुकारतीं हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥

नवेलि हे चमेलि तू प्रफुल्ल है लतान में, बिना पिया मिले अरी न फूल हों हियान में,
बता कहाँ कन्हाई री हमें न चैन प्रान में ।
पुकारती हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥

रसाल हे तमाल हे निवास तीर्थथान में, रोपकार धार के तनु तपो वनान में,
कदम्ब उच्च तू समर्थ दूर के दिखान में ।
पुकारती हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥

अभीर एक पूतना पवित्र प्रेम तान में, भई जु एक बाल नन्दलाल के प्रमान में,
बमार चक्र एक हो लगी शिशु उड़ान में ।
पुकारती हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥

भुजा धरे इकांगना इकालि अंश थान में ।
कहै ललाम मो गति निहार री पयान में,
तिया पिया बनी घनी धनांग भावनान में ।
पुकारती हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥
इकालि कालिया भई द्वितीय नृत्यगान में,
प्रवीन श्याम है गई शिरो पदांक दान में,
कलिन्द नन्दिनी तटै सुधी न खान-पान में ।
पुकारती हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥
भये न व्यक्त ढूँढती फिरी सबै वनान में,
मिलि सबै मतौ कियो गुणानुवाद गान में,
भई विहाल गीत गा रही अलापनान में ।
पुकारती हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥
प्रकट न तौ हु नन्द के किशोर साधनान में,
निःसाधना भई कियो विलाप सुस्वरान में,
व्रजेन्द्र चन्द्र आ मिले कदम्ब गोपिकान में ।
पुकारती हरि-हरि हरी-हरी लतान में ॥

पंडितजी ने बरसाने की महिमा के सम्बन्ध में 'वृषभानुपुर शतक, 'वल्लभ अंग माधुरी' नामक ग्रन्थ की भी रचना की है ।

आवत जात हौं हार परी री ।
ज्यों ज्यों प्यारो विनती कर पठवत त्यों त्यों तू गढ़ मान चढ़ी री ।
तिहारे बीच परे सोई बाबरी हौं चौगान की गेंद भई रीं ।
'गोविन्द' प्रभु को वेग मिल भामिनी सुभग यामिनी जात बही री ।

गोविन्दस्वामीजी का पद है, इसमें ऐसा लिखा है कि राधारानी का मान शिखर के नीचे से शुरू हुआ और जैसे–जैसे श्यामसुन्दर ने मनाया वैसे–वैसे श्रीजी ऊपर चढ़ती आयीं । जब श्रीजी ऊपर चढ़ आयीं तो श्याम सुन्दर ने सखियों का सहारा लिया । उन्होंने विशाखा जी व ललिता जी से कहा कि जाओ राधा रानी को मनाओ, हमारी तो सामर्थ्य नहीं है । हम तो थक गये, श्री ललिता जी व अन्य सखियाँ जब यहाँ आती हैं और श्रीजी से कहती हैं कि आप अपना मान तोड़ दो तो श्रीजी मना कर देती हैं । सखी ठाकुर जी के पास नीचे जाती हैं तो ठाकुर जी फिर ऊपर भेज देते हैं फिर नीचे जाती हैं तो फिर ऊपर भेज देते हैं तो आखिर में सखी बोली कि हे राधे ! इस गिरि पर मैं कई बार चढ़ी और कई बार उतरी । मैं तो थक गई । आपका मान तो टूटता ही नहीं । मैं और कहाँ तक दौड़ूँ? इधर से आप भगा देती हो और उधर से वो बार–बार प्रार्थना करते हैं कि जाओ–जाओ । सखी कहती है कि हे राधे ! मैं चौगान की गेंद की तरह से भटक रही हूँ । (क्रिकेट में तो एक आदमी गेंद को मारता है, पर चौगान में हर कोई गेंद को मारता है) वैसे ही आप दोनों मुझे मार रहे हैं । हे राधे ! जल्दी से श्याम सुन्दर से मिलो । ये रात बीती जा रही है ।

बाबाश्री के माता-पिता की गौभक्ति का वैभव 'श्रीमाताजी गौशाला'

परम श्रद्धेय श्रीबाबामहाराज के परमपूज्य पिता श्रीबलदेवप्रसादशुक्लजी और परम पूज्या माताजी श्रीमती हेमेश्वरीदेवीजी परमादर्श गौभक्त थे। पिताश्री ने गौ-गोविन्द-सेवाभाव (गाय ही गोविन्द है) से भावित होकर प्रयाग में अपने सदन में एक गाय को रखकर अत्यंत श्रद्धा और स्नेह से उसकी सेवा प्रारंभ की।गो ग्रास अर्पित किये बिना वह स्वयं कभी भोजन नहीं करते थे।गाय तो वात्सल्य का साकार स्वरूप होती है।अपने वत्स और सेवक के प्रति उसका हृदय अगाध स्नेह से परिपूरित होता है।बाबाश्री के पूज्य पिताश्री बाहर से जब भी अपने आवास स्थल में आते तो उनके द्वारा पालित वह वत्सला स्वरूप गोमाता अपने वात्सल्य जनित स्नेह की रसधारा से सींचती हुई जिह्वा से उनके शरीर को चाटती थी; यह उसका प्रतिदिन का क्रम बन गया था।पिताश्री भी गौमाता के इस विलक्षण वात्सल्य-रस का सम्मान करते और वह वात्सल्यमयी जिह्वा द्वारा उनके शरीर को स्नेह-जल से स्नान कराती तथा वे उस भाव-नीर में निमग्न रहते।माता-पिता की भावमयी गौसेवाराधन के प्रताप से ही श्रीबाबामहाराज का इस धराधाम पर अवतरण हुआ।श्रीबाबा के छः वर्ष की अल्पावस्था में ही पूज्य पिताश्री का देहावसान हो गया था।प्रयाग में रामबाग नामक स्थान में उस समय एक विशाल 'घास का मैदान' गायों के लिए चरागाह बना हुआ था; वहाँ बहुत-सी गायें चरने के लिए आतीं थीं, पिताश्री की गाय भी उस मैदान में जाती थी किन्तु पिताजी के आकस्मिक निधन से शोकाकुल होने के कारण कुछ खाती नहीं थी।पिताश्री की गोसेवा के उपलक्ष्य में समस्त गायों को गो ग्रास के रूप में वहाँ आटे की लोई खिलाई गयी, अन्य गायों ने तो उसे खा लिया परन्तु पूज्य पिताश्री द्वारा पालित-पोषित इस गौमाता ने उस आटे की लोई को ग्रहण नहीं किया अपितु उसे देखकर वह पिताजी की स्मृति में शोकग्रसित होकर अश्रु-प्रवाहित करती रही; इस घटना को श्रीबाबामहाराज ने स्वयं देखा था।बाबाश्री की पूज्या माताजी भी बहुत ही श्रद्धा-भाव से गौ-सेवा करती थीं, वे प्रतिदिन अत्यन्त निष्ठा के साथ गौमाता के लिए गौ-ग्रास (रोटी) निकालती थीं। जब श्रीबाबामहाराज का प्रयाग से अखण्ड ब्रजवास हेतु श्रीबरसानाधाम में आगमन हुआ तो श्रीमाताजी के हृदय में भी ब्रजवास करने की उत्कट उत्कंठा जागृत हुई और उन्होंने श्री बाबा के पास यह सन्देश भेजा कि ब्रज आने पर मैं किसी गोभक्त ब्राह्मण को गोदान अवश्य करूँगी।इसके लिए एक ऐसे सुयोग्य ब्राह्मण की खोज करो जो निःस्वार्थ भावना से आजीवन गाय की सेवा करे, गाय के वृद्ध होने अथवा दुग्ध उत्पादन में असमर्थ होने पर असहाय की भाँति उसका परित्याग न करे, वधिकों के हाथों उसका विक्रय न कर दे।माताजी के इस संदेश से अवगत होने पर श्रीबाबा थोड़ा चिंतित हुए कि ऐसे गौभक्त ब्राह्मण को कहाँ खोजा जाए किन्तु बाद में पूज्या माताजी की गौभक्ति-भाव के प्रताप से श्रीबाबा के परम विश्वसनीय बठैन ग्राम निवासी श्रीरामा पंडितजी ने आजीवन गौ-सेवाव्रत को सहर्ष स्वीकार कर लिया; श्रीबाबा के अनुरोध से वे बरसाना आये और अनन्य गौ भक्ता वृषभानुनंदिनी श्रीराधिकारानी के करकमलों से निर्मित श्रीगह्वरवन में परमादरणीया श्री माता जी के द्वारा वास्तविक ब्रजवासी गौभक्त श्रीरामापंडितजी को गौ-दान किया गया; उन्होंने अत्यधिक श्रद्धा के साथ माताजी के द्वारा दान की गई गाय की सेवा की, उनकी इस अनुपम गौभक्ति के कारण ही आज तक वे श्रीबाबा महाराज के परम कृपापात्र बने हुए हैं।वस्तुतः माता-पिता की परम श्रद्धामयी गौभक्ति के प्रताप से श्रीबाबामहाराज को श्रीजी की अन्तरंग नित्य लीलाभूमि गह्वरवन (श्रीबरसाना) के अखण्डवास की प्राप्ति हुई ।पूज्यनीय महाराज जी अपनी माता जी के इकलौते बेटे थे, जैसे-तैसे उन्हें

पता लगा कि वह बरसाने में हैं तो उन्हें खोजती हुई यहाँ आयीं।गीली आँखों से झर-झर अश्रु धारा बह रही थी, 'राम-राम' (बाबा के बचपन का नाम) कहकर फूट- फूटकर रोने लगीं।एक-दो दिन रुकीं फिर महाराजजी ने उन्हें वापिस भेज दिया।बाबा प्रियाशरण जी को जब पता लगा कि इनकी माँ आयीं थीं, उन्हें रुकने नहीं दिया तो उन्होंने समझाया – "रामेश्वर जी ! माँ आतीं हैं, रुकें तो उन्हें भी रुकने दो, भगाओ नहीं, लोगों की परवाह मत करो।माँ को आश्रय दो, वह भी ब्रजवास करें ।" इसके पहले महाराज जी की कुटी में स्त्रियों का प्रवेश नहीं था, माताजी के आने से वह नियम टूट गया।रामप्रसाद दीक्षित डिस्ट्रिक्ट जज थे, वह भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी के सच्चे सेवक थे।दीक्षित जी इलाहाबाद के रहने वाले थे।कुछ समय हाईकोर्ट में रजिस्ट्रार के पद पर रहे, फिर कुछ दिन सुप्रीम कोर्ट में भी सर्विस किये।भाई जी को वह गुरु मानते थे।एकबार जज साहब, राधे बाबा और भाई जी बरसाना आये।महाराज जी को उन्होंने बुलाया था, वह मिलने के लिए श्रीजी मन्दिर गये थे।माता जी को ये लोग पहले से जानते थे।माताजी की इच्छा थी कि उनके प्रभाव व सत्संग से राम (श्री बाबा महाराज) लौटकर इलाहाबाद आ जायें।भाईजी श्रीपोद्दारजी ने महाराज जी से कहा कि कुछ सुनाओ तो उन्होंने राधासुधानिधि के कुछ श्लोक सुनाये।उन्हें पूरी 'राधासुधानिधि' याद थी।इतने भाव से महाराज जी श्लोक गा रहे थे कि उन सबकी अश्रु धारा बहने लगी।राधासुधानिधि के अलावा कुछ 'वृन्दावन-शतक' के श्लोक भी सुनाये।वे भी रस में ऐसे डूब गये कि ब्रज छोड़कर इलाहावाद जाने के लिए एक बार भी नहीं कह सके।भाई जी के परिकर ने उनसे दूध की व्यवस्था कर देने को कहा परन्तु महाराज जी ने स्वीकार नहीं किया; बाबाश्री की वास्तविक ब्रजरसिकों जैसी ही रहनी (एकमात्र भिक्षावृत्ति से जीवन-निर्वाह करने की) थी । श्रीबाबामहाराज जिस समय (सन् १९६६-६७ में दिसंबर-जनवरी में) वृन्दावन पढ़ने जाया करते थे।आपकी दैनिक क्रियाओं व अलौकिक प्रतिभा का सब लोहा मानते थे।'निम्बार्क महाविद्यालय के सामने बिहारीजी' का बगीचा है, उसमें एक बड़ा तालाब है, उसमें रोजाना सवेरे पाँच बजे भयंकर सर्दी के समय गोता लगाया करते थे।इनके अनन्त ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री देवी स्वयं लक्ष्मी जी भी ब्रज में गाय बनने के लिए लालायित रहती हैं।चारों ही युगों में सनातन धर्म में गाय की महिमा सदैव ही सर्वोपरि रही है । शौर्य और स्वाध्याय की प्रखरता की प्रशंसा श्रीअखंडानंदजीमहाराज ने सुनी जो उस समय श्रीमहाराजजी के साथ ही 'झा जी' से संस्कृत पढ़ते थे तो उनकी भी इच्छा इनसे मिलने की हुई।वह विद्वानों का बड़ा आदर करते थे।श्रीबाबा उनके पास नहीं गये क्योंकि वह कुछ देते और ये कुछ लेना नहीं चाहते थे।श्री अखण्डानंद जी महाराज ने सुना कि ये केवल भिक्षा की ही रोटी पाते हैं, किसी भण्डारे आदि में भी नहीं जाते हैं तो उनकी इच्छा हुई कि इनके लिए फल, दूध की व्यवस्था कर दी जाए।उन्होंने अपने शिष्यों द्वारा 'झा जी महाराज' व हमारे बाबा के पास संदेश भिजवाया, परन्तु उन्होंने (श्रीबाबा ने) स्वीकार नहीं किया; ब्रजवासियों से भिक्षान्न लेकर ही प्रसाद पाते थे।एकबार महाराज जी ने सन् १९५८-५९ में रमणरेती वाले श्रीहरिनामदासजी महाराज की सन्निधि में ब्रज चौरासी कोस की यात्रा की थी, उस यात्रा में श्रीमहाराज की माताजी भी थी।श्रीमहाराजजी यात्रा में भण्डारे का प्रसाद नहीं पाते थे, पास के गाँव में से भिक्षा कर लाते थे, वहीं भिक्षान्न पाते थे । यात्रा में खूब कीर्तन करते थे क्योंकि संगीत के मर्मज्ञ तो थे ही । श्रीहरिनामदासजी महाराज बड़े पहुँचे हुए संत थे, वह कहा करते थे कि जो यात्री ब्रजयात्रा के इन पड़ावों का नित्य स्मरण करेंगे, उन्हें प्रणाम करेंगे, उनको निश्चित रूप से ब्रजवास मिलेगा । इसका चमत्कार ये रहा कि महाराजजी ने माताजी के लिए इन पड़ावों के नाम लिखकर दे दिए थे, वे रोजाना इन पड़ावों का नाम उच्चारण करतीं, उन्हें नित्य प्रणाम करतीं थीं, उसका परिणाम यह हुआ था कि माताजी को भी अखण्ड ब्रजवास मिल गया और उनका शरीर गह्वरवन में ही छूटा । वास्तव में जहाँ कृतज्ञता है वहीं भक्ति है, वहीं प्रभु की कृपा है । पूज्य महाराज जी आज भी रमणरेती के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हैं कि ब्रजयात्रा का प्रेम हमें वहीं से मिला । सनातन धर्म के समस्त आर्ष ग्रन्थों और ब्रजरस रसिक महापुरुषों ने विश्ववन्द्या जगज्जननी गाय की अद्भुत महिमा का मुक्त कंठ से प्रशस्ति गायन किया है।ब्रजनिष्ठ एक महापुरुष ने लिखा है – **कमला हू तरसत रहीं, हम न भईं ब्रज गाय ।**
राधा लेती दोहनी, मोहन दुहते आय ॥

आज से लगभग १००-२०० वर्ष पूर्व भारत में अंग्रेजों के शासनकाल में गौसेवा की विलक्षण चमत्कारपूर्ण घटना का तत्कालीन समाचार पत्रों में उल्लेख किया गया था।अंग्रेजों के शासनकाल में भारतीयों का क्रूरतापूर्वक दमन किया जा रहा था, कितने ही निरपराधी देशभक्तों को अंग्रेज-शासकों द्वारा फाँसी के फंदे पर लटका दिया गया।एकबार एक अंग्रेज न्यायाधीश ने किसी गौभक्त को फाँसी की सजा सुना दी।जिस व्यक्ति को फाँसी की सजा दी जाती थी, उसके गले में रस्सी बाँधकर उसे कुँए में लटकाया जाता था।जिस गौभक्त को फाँसी की सजा दी गई, जल्लादों ने उसके गले में मोटी रस्सी बाँधकर उसे गहरे कुँए में लटका दिया और पुनः जब ऊपर खींचा गया तो अत्यंत आश्चर्यजनक घटना यह हुई कि वह व्यक्ति जीवित था।जल्लादों द्वारा दूसरी बार उसके गले में मोटा रस्सा बाँधकर नीचे लटकाया गया और ऊपर खींचने पर वह पुनः जीवित निकला; यह देखकर सभी को परम विस्मय हुआ।स्वयं अंग्रेज-जेलर भी इस घटना से अत्यधिक आश्चर्यचकित होकर वहाँ आया और इस बार उसने स्वयं अपने हाथों से इस व्यक्ति के गले में मजबूती के साथ रस्सी को बाँधा एवं इस बार उसको बहुत देर तक नीचे लटकाए रखा गया।जब उसे ऊपर उठाया गया तो सबने देखा कि इस बार भी वह जीवित था और हँस रहा था।अंग्रेज-जेलर ने इस व्यक्ति से पूछा कि क्या कारण है जो तीन बार फाँसी पर लटकाए जाने पर भी तुम्हारी मृत्यु नहीं होती है।उस व्यक्ति ने उत्तर दिया – "आप लोग मेरे गले रस्सी बाँधकर जब मुझे नीचे लटकाते हैं तो एक गाय वहाँ आती है और अपने दोनों सींगों के द्वारा वह मुझे ऊपर उठा देती है तथा मृत्यु के मुख में जाने से बचा लेती है।ऐसा इसलिए होता है क्योंकि एकबार एक वधिक (कसाई) गाय को पकड़कर वधशाला में वध करने के लिए ले जा रहा था, मैंने उस वधिक को धन देकर गाय की रक्षा की थी।मेरी इसी गौ रक्षा का यह प्रताप है कि गौमाता भी मुझे बारम्बार फाँसी के फंदे पर लटकाए जाने पर भी बचा लेती है ।" अंगेजों का यह क़ानून था कि तीन बार फाँसी पर लटकाए जाने पर जिसकी मृत्यु नहीं होती थी उसे मृत्यु दण्ड से मुक्त कर दिया जाता था ।

वास्तव में गौसेवा की अनन्त महिमा है।आदर्श गौ भक्त माता-पिता की गौसेवा के प्रताप से ही श्री बाबा महाराज के हृदय में श्रीजी के धाम में गौ सेवा हेतु गौशाला स्थापित करने की भावना जागृत हुई और सन् २००७ में पूज्या श्रीमाता जी के नित्य धाम गमन होने पर उनकी स्मृति में श्रीमाताजी गौशाला की आधारशिला रखी गई।४-५ गायों से आरम्भ हुई इस गौशाला में वर्तमान में साठ हजार से अधिक गौवंश की मातृवत् सेवा के अनन्त महिमाशाली पुण्य कार्य का सम्पादन किया जा रहा है।गौवंश की संख्या सतत वृद्धि को प्राप्त हो रही है।शनैः शनैः यह संख्या एक लाख तक पहुँच जाएगी।आज यह गौशाला अपनी अनुपम निःस्वार्थ – निष्काम सेवा के कारण भारतीय मूल की गायों की विश्व की सर्वाधिक मान्यता प्राप्त गौशाला बन गई है।

परम पूज्या श्रीदीदीजी का संक्षिप्त परिचय

पूज्य श्री बाबा महाराज की बड़ी बहन श्रीमती तारकेश्वरी देवी जिन्हें सभी दीदी जी के रूप में जानते हैं, वह कानपुर में डिग्री कॉलेज की प्रोफ़ेसर थीं । श्री बाबा महाराज के प्रति अत्यधिक स्नेह होने के कारण अध्यापन कार्य एवं गृहस्थ जीवन से पूर्णतया विरक्त होकर उन्होंने भी बरसाना के गह्वरवन में स्थाई ब्रजवास किया । वह स्वयं भी मानमंदिर में आध्यात्मिक शिक्षा से ओतप्रोत एक दिव्य गुरुकुल के पक्ष में थीं क्योंकि उन्होंने आधुनिक भौतिक शिक्षा के दूषण को अत्यन्त निकट से देखा था इसीलिए सर्वत्याग के सिद्धांत पर जीवनयापन करते हुए वह अपनी पेंशन की समस्त धनराशि मानमंदिर गुरुकुल में अध्ययनरत् बालक-बालिकाओं के प्रति प्रदान करती रहीं, उससे प्रारम्भिक अवस्था में बच्चों को बहुत सहायता मिली । इसीलिए मानमन्दिर गुरुकुल उन्हीं के नाम पर स्थापित किया गया है । उन्होंने श्रीबाबामहाराज की आदर्श भगिनी का पूर्ण दायित्व निभाया । अत्यंत वृद्धावस्था में भी पूज्य बाबा महाराज को अपने हाथों से भोजन बनाकर पवाती थीं । श्रीबाबा महाराज के स्वास्थ्य के प्रति अत्यधिक चिन्तित रहने के कारण वह सदा-सर्वदा अपने इष्ट महादेवजी की आराधना में सतत् संलग्न रहा करती थीं । वास्तव में वर्तमान समय में ऐसी बहन होना अत्यन्त कठिन है, जिन्होंने अपने सम्पूर्ण परिवार की आसक्ति का त्यागकर मानमंदिर गुरुकुल में यथाशक्ति सहयोग दिया । मानमन्दिर के गुरुकुल का नाम "दीदीजी गुरुकुल" होने का मूल कारण यही है ।

पाश्चात्य विद्वान् हर्बर्ट स्पेन्सर ने कहा है-

Not education but character is man's greatest need and greatest safeguard.

न कि शिक्षा वरन् चरित्र मानव की सबसे बड़ी आवश्यकता है और उसका सबसे बड़ा रक्षक है ।

भारत के महापुरुषों ने भौतिक शिक्षा नहीं अपितु **'आध्यात्मिक शिक्षा'** को चरित्र निर्माण का सबसे प्रभावशाली व महत्वपूर्ण माध्यम माना है । आधुनिक युग के कलह व सर्वत्र कालुष्य से व्याप्त भौतिकवादी समय में धर्महीनता को ही धर्म निरपेक्षता की संज्ञा देने के प्रयास किये जा रहे हैं, ऐसे नास्तिकता के वातावरण में आध्यात्मिक शिक्षा की आवश्यकता और भी अधिक बलवती हो जाती है । भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने भी मानवीय मूल्यों, चरित्र के विकास हेतु आध्यात्मिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया है । अध्यात्म रहित शिक्षा के गिरते हुए स्तर और उसके बढ़ते हुए व्यापारीकरण पर अंकुश लगाने की दृष्टि से श्रीमानमन्दिर में दीदीजी गुरुकुल का उद्भव गह्वरवन बरसाना के अतिनिःस्पृह संत श्रीरमेशबाबा महाराजजी की प्रेरणा से हुआ । बालकों को शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक व आध्यात्मिक आयामों को समेटे एक भक्तिवर्धक शिक्षा प्राप्त हो, यही इस गुरुकुल का लक्ष्य है । दीदीजी गुरुकुल के दो विभाग हैं - बालकों के आवास और शिक्षा की व्यवस्था मान मन्दिर पर है तथा बालिकाओं की शिक्षा और आवास व्यवस्था श्रीराधारानी के करकमलों से निर्मित गह्वरवन की गोद में बसे 'रसकुंज' में है । दीदीजी गुरुकुल में १०० से अधिक बालक-बालिकायें अध्ययनरत हैं । शिक्षा के अतिरिक्त ये सभी बाल साधक-साधिकाएँ प्रतिदिन पूज्य श्रीबाबामहाराज के प्रातः कालीन सत्संग में सम्मिलित होते हैं तथा आराधनस्थल रसमंडप-भवन में प्रतिदिन सायंकाल 'नृत्य-गान' द्वारा रसोमयी आराधना करते हैं । श्रीप्रह्लादजी महाराज ने कहा है –

कौमार आचरेत्प्राज्ञो धर्मान् भागवतानिह ।
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम् ॥

(श्रीमद्भागवत ७/६/१)

कौमार अवस्था से ही भक्ति करनी चाहिए क्योंकि मनुष्य जीवन अत्यन्त दुर्लभ है । इसलिए बालक-बालिकाओं में भक्तिमय चरित्र का प्रस्फुटन हो, इसी उद्देश्य से दीदीजी गुरुकुल की स्थापना हुई है । दीदीजी गुरुकुल के सभी अध्यापक परम निष्किंचन संत हैं, वे निष्काम भाव से निःशुल्क शिक्षा प्रदान करते हैं व मधुकरी वृत्ति से भिक्षाटन कर जीवन-निर्वाह करते हैं तथा उनका आचरण विशुद्ध है । यहाँ की यह विशेषता तो अनुभव के द्वारा ही जानी जा

सकती है । समाज में प्रत्येक व्यक्ति अपने को निर्लोभी बताता है, किन्तु वर्तमानकाल में शिक्षण संस्थायें उद्योग के रूप में परिवर्तित हो गयी हैं और शिक्षा उद्योग में लाखों रुपयों की घूस का प्रचलन है, ये बात प्रायः सभी जानते हैं । शिक्षण संस्थाओं का अत्यधिक शुल्क होता है तब वहाँ प्रवेश मिलता है, यह आध्यात्मिक-विनाश है, गुरुकुल नहीं है । ६४ वर्ष पूर्व जब पूज्यबाबाश्री ब्रज में आये तो मान मंदिर में उनके पास स्थानीय गाँवों के बालक अध्ययन हेतु आया करते थे । पूज्य श्री ने इन ब्रजवासी बालकों को गीता, भागवत और रामायण तथा अन्य वैदिक ग्रन्थों तथा महापुरुषों के पदों का अध्ययन कराया । इसके अतिरिक्त महाराजश्री ने इन्हें संगीत की भी शिक्षा दी । श्रीबाबामहाराज की संगीत शिक्षा के प्रभाव से बालक गायन, और वादन कला में दक्ष होकर मानगढ़ पर अत्यन्त उत्साह के साथ देर रात तक कीर्तन किया करते थे । ईश्वर-भक्ति के साथ ही बाबाश्री ने इन बालकों को देश भक्ति की भी शिक्षा दी । हर बालक अत्यंत उत्साह से देश भक्ति के गीत गाता था । ये बालक श्री बाबा महाराज के नेतृत्व में मानगढ़ के रासमण्डल पर अत्यंत आवेशयुक्त कीर्तन के साथ देर रात तक नृत्य किया करते थे । श्रीबाबामहाराज के द्वारा मानगढ़ पर संचालित गुरुकुल का यह प्रथम स्वरूप था । महाराजश्री ने इन बालकों और अन्य ब्रजवासियों को धामनिष्ठा की शिक्षा देकर इन्हें धाम-सेवा की ओर भी प्रेरित किया । वर्तमानकाल में मानमंदिर गुरुकुल के आदर्श छात्रों में डॉ. रामजीलाल शर्मा, श्रीराधाकांत शास्त्री (भइयाजी), सुश्री मुरलिका शर्मा और बालसाध्वी श्रीजी हैं । इन्होंने श्रीबाबा महाराज की शिक्षा से अनुप्राणित होकर अपना सम्पूर्ण जीवन ब्रजभूमि की निष्काम सेवा और जनकल्याण के प्रति समर्पित कर दिया है । डॉ. श्री रामजी लाल शर्मा, सुश्री मुरलिका जी और बाल साध्वी श्रीजी देश-विदेश में निष्काम भाव से भारतीय संस्कृति की आत्मा ब्रज संस्कृति का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं । इनके द्वारा ही ब्रज पर्यावरण की सुरक्षा हेतु ठोस प्रयास व मान मंदिर के कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न हो रहे हैं । संग्रह-परिग्रह से सर्वथा दूर ये आदर्श ब्रजवासी अपने पास एक पैसा भी नहीं रखते हैं । विदेशों में भी जहाँ–जहाँ ये गये, इन्होंने भारत की गरिमा और सम्मान को बढ़ाया है । प्राचीनकाल में भारत जगद्गुरु क्यों था ? ऐसे आदर्श नागरिकों के कारण ही भारत जगद्गुरु के रूप में विख्यात था । इसी आदर्श को लेकर मानमंदिर में दीदी जी गुरुकुल की स्थापना की गयी है ।

परम उदार संत श्रीरामजीलाल शास्त्री

डॉ.श्रीरामजीलालशर्मा मानमन्दिर सेवा संस्थान के अध्यक्ष तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर के विद्वान श्रीमद्भागवत व्यास हैं । पूज्य श्रीबाबामहाराज के वह विशेष कृपापात्र हैं । उनके सदन श्रीराधारसमन्दिर में प्रतिदिन हजारों की संख्या में श्रद्धालुगण भोजन प्रसाद ग्रहण करते हैं । जब श्रीबाबामहाराज प्रयाग से बरसाना आकर मानगढ़ पर निवास करने लगे, उसके कुछ समय पश्चात् ही डॉ.रामजीलालशर्मा अपनी बाल्यावस्था से ही महाराजजी के शरणापन्न हुए । उनकी माताजी भक्तिमती यमुनाजी की श्रीबाबामहाराज के प्रति अगाध निष्ठा होने के कारण उन्होंने बचपन से ही रामजीलाल को श्रीबाबा के प्रति समर्पित कर दिया था । यमुनादेवीजी का अपने इन पुत्र को कड़ा आदेश था कि रात्रि को मानगढ़ पर श्रीबाबामहाराज के पास ही रहो, चाहे घर (रसमंदिर) में कितना भी संकट हो परन्तु रात्रि के समय गुरुदेव के निकट मानगढ़ में ही रहना है । इस आदेश का यह परिणाम था कि रसमंदिर में कई बार चोरों ने सेंध लगायी परन्तु श्रीरामजीलालजी रात्रि को श्रीबाबामहाराज की सेवा में मानगढ़ पर ही रहे, संकट की घड़ी में भी अपने आवास स्थल रसमंदिर में नहीं रुके । डॉ.श्रीरामजीलाल शर्मा को श्रीमद्भागवत प्रवक्ता होने के कारण पण्डितजी के नाम से भी लोग जानते हैं । अपनी परम पूज्यनीया माताजी की तरह उनका भी श्रीबाबामहाराज के प्रति सर्वात्मसमर्पण है । बचपन से ही उनकी पूज्य महाराजश्री के प्रति कितनी प्रगाढ़ निष्ठा थी, इसका अनुमान उनके बाल्यावस्था की एक घटना से लगाया जा सकता है –एकबार बरसाने में किसी सांस्कृतिक पर्व (मेला) के आयोजन में पण्डितजी के माता-पिता ने बच्चों को मेले का आनन्द उठाने के लिए सभी को कुछ पैसे दिए थे । अन्य बच्चों ने तो अपनी रुचि के अनुसार मेले में कुछ वस्तुयें खरीदकर पैसे खर्च कर दिए परन्तु पंडित श्रीरामजीलालजी माता-पिता के दिए हुए उन पैसों को लेकर श्रीबाबामहाराज जी के पास मानगढ़ पर आये और उन्हें वह पैसे भेंट करने लगे । श्रीबाबामहाराज ने उनसे कहा कि तुम्हें पता तो है कि मैं धन के स्पर्श से भी दूर रहता हूँ फिर तुम यह पैसे मुझे देने क्यों लाये? इस प्रकार श्रीबाबामहाराज के द्वारा पैसे लेने से इन्कार करने पर अगले दिन बालक रामजीलाल उन्हीं पैसों से बाजार से कुछ सौंफ और इलायची खरीद लाये और उन्हें एक पुड़िया में बाँधकर श्रीबाबा के तकिये के नीचे रख दिया । जब महाराज जी ने शयन के समय तकिये को उठाया तो उन्हें वह पुड़िया मिली, उसे खोलकर देखा तो सौंफ-इलायची मिली, वह समझ गये कि ऐसा रामजीलाल ने ही किया होगा । उनके आने पर श्रीबाबा ने उनसे पूछा– "तुमने मेरे तकिये के नीचे सौंफ-इलायची क्यों रखी?" बालक रामजीलाल ने उत्तर दिया कि आपने पैसा नहीं स्वीकार किया, इसलिए मैं उस पैसे से आपके लिए सौंफ-इलायची खरीद लाया जिससे कि आप प्रसाद पाने के बाद उसे खा लिया करें, उससे पाचन शक्ति ठीक रहेगी । इसी प्रकार एक अन्य चमत्कारिक घटना भी पंडित जी के जीवन से जुड़ी है जिससे उनको पुनर्जन्म की प्राप्ति हुई । जब पंडितजी वृन्दावन में नगरपालिका इण्टर कालेज में पढ़ते थे तो एकबार वह गंभीर रूप से बीमार हो गए । उस समय वह 'रंगजी मंदिर' के पीछे 'करनानी दाऊजी के मंदिर' में रहते थे । मंदिर के प्रांगण के पीछे एक हनुमान जी का मंदिर था । गर्मी के दिन थे, अतः ये वहीं सोते थे । यह घटना सन् १९६५ में गर्मियों की छुट्टी के समय की है । पंडित जी इतने अधिक बीमार हो गए थे कि तख़्त से उतार कर इन्हें जमीन पर लिटा दिया गया था । जतीपुरा में इनके कुछ रिश्तेदार रहते थे, उन्हीं के माध्यम से ये वृन्दावन के मंदिर में रहे । विद्यालय वालों ने जतीपुरा फोन कर सूचित किया कि रामजीलाल की मरणासन्न स्थिति है, वहाँ से सूचना इनके घर बरसाना पहुँची । इनकी अस्वस्थता की सूचना पाकर पंडितजी की माताजी श्रीबाबामहाराज के साथ प्रातः वृन्दावन पहुँचीं । उस रात्रि में बड़ा ही विलक्षण चमत्कार हुआ, पंडित जी ने स्वप्न देखा कि यमराज के दूत उन्हें लेने आ गए और बाँधकर ले जाने लगे । पंडित जी ने यमदूतों से कहा– "आप लोग यहाँ हनुमान जी के मंदिर में आये

कैसे, जिनके ऊपर महापुरुषों की छाया हो, वहाँ आपलोग नहीं जा सकते हैं ।" यमदूतों ने पंडितजी की एक न सुनी और उन्हें यमराज के यहाँ ले गए, वहाँ उन्हें यमराज के दर्शन हुए । वहाँ पर एक बहुत बड़े पुस्तकालय का लम्बा-चौड़ा हॉल था, जिसमें बड़े-बड़े अनेकों रजिस्टर रखे थे; यह सब पंडित जी ने देखा । उन्होंने यमराज से निवेदन करते हुए कहा– "जहाँ हनुमान जी विराजमान हों और संत का आश्रय हो, वहाँ तो यमदूत जाते नहीं हैं, फिर ये लोग मुझे यहाँ कैसे ले आये ?" यमराज ने कहा कि कर्म का फल तो सबको भोगना ही पड़ता है । यह सुनकर पंडित जी ने यमराज से कहा– "आप जो चाहे करें परन्तु पाँच मिनट के लिए मुझे छुट्टी दे दीजिये ताकि मैं वृन्दावन जाकर भोले-भाले संत-महात्माओं से कह आऊँ कि कीर्तन करने व कथा सुनने से कुछ नहीं होता है, कर्मों का फल तो सबको भोगना ही पड़ता है ।" इतना सुनते ही मुस्कुराते हुए यमराज ने अपना हाथ नीचे किया और पंडित जी के मृतक शरीर में जान आ गयी । इस घटना को स्वप्न भी नहीं कहा जा सकता । पंडित जी की आँख खुलते ही ऊपर का सारा दृश्य उनकी आँखों के सामने आ गया । पूज्य महाराज जी को जब ये सब बताया गया तो उन्होंने कहा– "प्रभु की कृपा से यह नया जन्म हुआ है ।"महापुरुषों का मन में आश्रय हो, उनकी छत्र-छाया रहे तो यमराज भी मनुष्य का कुछ नहीं कर सकते ।

पंडित रामजीलालजी की माता जी की घर की आर्थिक दशा अत्यधिक शोचनीय होने के बावजूद भी साधु-संतों और अतिथियों की सेवा में व्यस्त रहती थीं तो पंडित जी भी उनके इस सेवा-कार्य में सहयोग करने के लिए अत्यधिक श्रम करते थे । आगे चलकर श्रीबाबामहाराज ने पंडित जी को संस्कृत का अध्ययन कराया तथा श्रीमद्भागवत की शिक्षा दी । पूज्य महाराजश्री ने भागवत-कथाओं में व्यापारीकरण बढ़ता हुआ देखकर पंडित जी को भागवत-व्यास बनाकर जनकल्याण हेतु श्रीमद्भागवत-कथामृत के प्रचार-प्रसार की आज्ञा दी, उन्होंने स्पष्ट निर्देश दिया कि श्रीमद्भागवत का उद्देश्य अर्थोपार्जन करना नहीं है, निष्काम भाव से भागवत-कथामृत का वितरण करने से वक्ता और श्रोता को भगवान् और भगवत्प्रेम की प्राप्ति होती है । अतः तुम निष्काम भाव से केवल जनकल्याण के उद्देश्य से श्रीमद्भागवत-कथा का प्रचार करो । श्रीगुरुदेव बाबा महाराज की आज्ञा से पंडितजी ने निष्काम भाव से श्रीमद्भागवत-कथा का प्रचार करना आरम्भ कर दिया । पूज्य पंडित श्रीरामजीलालशर्मा अत्यन्त त्यागी और श्रीमद्भागवत तथा संस्कृत भाषा के प्रकांड विद्वान हैं । देश-विदेश में वह श्रीबाबामहाराज की आज्ञा से भागवत कथामृत की रसमयी सरिता को प्रवाहित करने में संलग्न हैं । जहाँ भी वह कथा कहते हैं, वहाँ से एक पैसा नहीं लेते, स्वेच्छा से 'श्रद्धालु भक्तजन' **कथा** में जो भी द्रव्य अर्पण करते हैं, उसे वह मानगढ़ पर आकर सर्वप्रथम श्रीबाबामहाराज को अर्पण कर देते हैं । वे भी उस धन को स्वयं ग्रहण न कर 'मान मन्दिर सेवा संस्थान' के विविध जनकल्याणकारी और धाम-सेवा के कार्यों में व्यय करा देते हैं ।वह अपनी कथा के माध्यम से प्रभात फेरी (नगर-कीर्तन) का भी प्रचार करते हैं । श्रीमद्भागवत सप्ताह के समापन पर वह श्रोताओं से दक्षिणा देने का अनुरोध करते हैं तो श्रोतागण सोचते हैं कि व्यासजी धन की दक्षिणा देने का अनुरोध कर रहे हैं परन्तु पंडित जी उनसे कहते हैं कि कथा- श्रवण की वास्तविक दक्षिणा है –**'भगवन्नाम-दान'** इसलिए आप लोग अपने नगर या गाँव में कीर्तन फेरी (प्रभात फेरी) चलाकर भगवन्नाम का दान करें, यही श्रीमद्भागवत कथा की सबसे बड़ी दक्षिणा है । उनकी वाणी का ऐसा प्रभाव पड़ता है कि श्रोतागण सहर्ष ही प्रभात फेरी चलाने के लिए तैयार हो जाते हैं और अगले दिन से ही संकीर्तन-फेरी का शुभारम्भ कर देते हैं । कई बार तो कथा में श्रद्धालु भक्तों ने स्वेच्छा से जो धन समर्पित किया होता है, उसे भी पंडितजी उन्हीं भक्तों को वापिस कर देते हैं यह कहकर कि इस धन से आप प्रभात फेरी के लिए मेगाफोन (माइक) व ढोलक आदि खरीद लें तथा कभी-कभी कहीं किसी गौशाला का निर्माण होना होता है या जहाँ मन्दिर नहीं होते तो वह अपनी कथा में समर्पित धन को कथा के आयोजकों को गौशाला व मन्दिर निर्माण हेतु वापस कर देते हैं । पंडित श्रीरामजीलाल जी इतने बड़े त्यागी हैं कि उन्होंने अपने निवास के लिए अपने सदन रसमंदिर या मानगढ़ में किसी कमरे तक का निर्माण नहीं करवाया, आज भी वह मानगढ़ में श्रीबाबामहाराज द्वारा प्रयुक्त कमरे में ही रहते हैं, प्रतिवर्ष वह अमेरिका भी भागवत-कथा के प्रचार

हेतु जाते हैं, उनके साथ उनकी भतीजी साध्वी मुरलिकाजी और भतीजे श्रीराधिकेशजी भी जाते हैं । वहाँ भी वे निष्काम भाव से कथावाचन करते हैं, कहीं किसी से मानमन्दिर सेवासंस्थान के विविध क्रियाकलापों हेतु दान की याचना नहीं करते हैं । साध्वी मुरलिका जी, साध्वी श्रीजी और श्रीराधिकेश जी को भागवत-व्यास बनाने का पूर्णश्रेय पंडित श्रीरामजीलाल को ही है, उन्होंने ही इन बच्चों को स्कूली भौतिक शिक्षा से पृथककर आध्यात्मिक भक्तिमय शिक्षा हेतु श्रीबाबामहाराज को समर्पित कर दिया, ये तीनों कथा-व्यास अपने ताऊजी के पदचिन्हों का अनुसरण करते हुए सर्वत्यागमय जीवन व्यतीत करते हैं और निष्काम भाव से श्रीमद्भागवत कथा कहते हैं । पंडित श्रीरामजीलाल शर्मा जी के आवास-स्थल श्रीराधारसमंदिर से उनकी पूज्य माता श्रीमती यमुना जी के परमोत्कृष्ट सेवा-भाव के कारण आज भी हजारों श्रद्धालुओं की भोजन-प्रसाद सेवा हो रही है । प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में अतिथि भक्तगण व साधु-संत रसमंदिर में प्रसाद पाते हैं । पंडित जी अत्यन्त उदार व्यक्तित्व के स्वामी हैं, उनकी उदारता के कारण कई अन्य भक्त भी भागवत-व्यास बन चुके हैं । उनकी उदारता के कारण ही उनके गृह रसमंदिर में प्रतिदिन किसी भी समय कोई भोजन करने पहुँच जाये तो कभी कोई वहाँ से भूखा नहीं लौटता । पंडित जी को यह उदारता और सेवा-भाव विरासत में अपनी माता परमभक्तिमयी श्रीमती यमुनादेवी से मिली है । माताजी ने रसमंदिर में अत्यन्त निर्धनता की स्थिति में भी साधु-संतों और अतिथियों की सेवा के व्रत को सर्वात्मभाव से निभाया और वह श्रीबाबामहाराज के प्रति भी पूर्ण समर्पित थीं । उनके यही दिव्य गुण श्रीपंडितजी में भी समाहित हैं । आधुनिक युग के भौतिकतावादी परिवेश में जहाँ आध्यात्मिकता के चोंगे में लोग वित्तैषणा और लोकैषणा का परिपोषण करने में लगे हैं, पंडितजी के पावन सदन श्रीराधारसमन्दिर जैसा त्यागमय परिवार, ऐसा त्यागमय घर दुनिया में अन्यत्र दुर्लभ ही है ।

छेड़ै रोज डगरिया में, तेरो ढीट कन्हैया मैया ||
बरस दिना याकी होरी होवै
पूछो सबै नगरिया में, तेरो ढीट कन्हैया ....|
फागुन की तौ कहा बताऊँ
छांड़ै रंग घघरिया में, तेरो ढीट कन्हैया ....|
भर भर फेंट गुलाल उड़ावै
करदे छेद बदरिया में, तेरो ढीट कन्हैया ....|
ऊबट बाट अकेली घेरै
रोकै गली संकरिया में, तेरो ढीट कन्हैया ....|
बैठ कदम पै वंशी बजावै
लै लै नाम बंसुरिया में, तेरो ढीट कन्हैया ....|
भयो दिवानों फाग खेल जाय
देखो गली बजरिया में, तेरो ढीट कन्हैया ....|
कैसे कोई बचैगी याते
डारै जाल मछरिया में, तेरो ढीट कन्हैया ....||

मेरे मुख पै अबीर, मेरे मुख पै अबीर, कान्हा ने कैसी मारी |
ये मारी वो मारी हाँ मारी रे ||
काहे की लै लई पिचकारी,
काहे को नीर, काहे को नीर, कान्हा ने ....|
कंचन की लै लई पिचकारी,
रंगन को नीर, रंगन को नीर, कान्हा ने ....|
लाज छोड़ मोय दीनी गारी,
कैसे धरूँ धीर, कैसे धरूँ धीर, कान्हा ने ....|
नरम कलैया पकर मरोरी,
ऐसौ है बेपीर, ऐसौ है बेपीर, कान्हा ने ....|
हार मेरो तोर्‌यो पकर लिपटाई,
मेरो फार्‌यो चीर, मेरो फार्‌यो चीर, कान्हा ने ....|
बीरी लै मुख आप खवावै,
मारै नैनन तीर, मारै नैनन तीर, कान्हा ने ....|
ऊधम पै हू प्यारो लागै,
अचरज मेरी बीर, अचरज मेरी बीर, कान्हा ने ....|
अँखियाँ प्यासी रहैं रैन दिन,
देखन यदुवीर, देखन यदुवीर, कान्हा ने ....|
लाख लोग नगरी बसैं,
सब लागै भीर, सब लागै भीर, कान्हा ने ....|
छेदै शमशीर, छेदै शमशीर, कान्हा ने ....||

अलौकिक प्रतिभा स्वरूपा ब्रजबालिका 'मुरलिकाजी'

ब्रजभूमि भगवान् राधामाधव की जन्मस्थली है जिसकी अलौकिकता का अनुभव बड़े-बड़े संतों-विद्वज्जनों ने किया है । इसमें मूर्धन्य महापुरुषों के अवतरित होने का भी हमारा इतिहास साक्षी है । जैसे - सूर, तुलसी, मीरा यहाँ तक कि स्वयं चैतन्य महाप्रभु, वल्लभाचार्य, स्वामी श्री हरिदास जी आदि ने अध्यात्म जगत में क्रान्ति ला दिया था। जिस समय सारा राष्ट्र विदेशी आक्रान्ताओं के उत्पीड़न से त्रस्त था, उस समय ऐसे महापुरुषों ने अपनी आभा-प्रतिभा से जगत को आलोकित कर परम कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया था । ऐसे ही वर्तमान काल में दिव्य संस्कारों को लेकर ब्रज के गहवरवन, बरसाना में जन्मी बालिका मुरलिका ने भी जन्म से ही आभास करा दिया कि यह कोई साधारण बालिका नहीं अपितु अवतरित दिव्यलोक की कोई दिव्यात्मा संसार को कुछ देने आई है । जिस समय भौतिक जगत अन्याय, अनाचार में और अंधत्व को प्राप्त कर स्वविनाश की भूमिका गढ़ता है उस समय भगवान् ही अपनी कृपा से अपने ही अंशभूत किसी दिव्यजीव को जगत कल्याणार्थ भूतल पर भेजा करते हैं । साधारण से घर में जन्मी परन्तु जन्म के बाद से ही साधारण घर, घर नहीं अपितु जनकल्याण का केन्द्र बन गया । श्रीराधारसमंदिर गहवरवन, बरसाना (मथुरा) आज एक ऐसा तपोमय स्थल है जहाँ हजारों भक्त नित्य निःशुल्क प्रसाद पाते हैं और निःशुल्क आवास कर यहाँ धामावास करते हैं । बचपन से ही ब्रजबाला मुरलिका को न खिलौनों का मोह था और न किसी खाने-पीने, पहनने के साधनों की जिज्ञासा थी । अनासक्ति इतनी कि न माता-पिता के प्रति आकर्षण और न अन्य किसी संगी साथी का संग । अकेले कहीं एकान्तिक चिन्तन में देखकर परिवारी जन तक आश्चर्यचकित होते कि इतनी छोटी और अबोध बालिका क्या चिन्तन करती है ? बस अपने श्रद्धेय गुरुदेव पूज्यपाद श्री रमेश बाबा जी के पास बैठना सदा उनको अच्छा लगता । महापुरुषों की निकटता और पूर्वजन्मों के दिव्य संस्कारों ने समस्त मायामोह से इस बालिका को सदा दूर रखा । प्रारंभिक शिक्षा अपने घर में संचालित विद्यालय 'रासेश्वरी विद्यामंदिर'में से बलात् अवश्य पूरा किया परन्तु जो जन्म पूर्व से ही निष्णात थी, उसे क्या आवश्यकता थी इन लौकिक विद्याओं की ? त्याग, वैराग्य इतना कि आज तक कभी द्रव्य का स्पर्श तक नहीं किया । इन्द्रियजित इस देवी ने मात्र दस वर्ष की आयु में श्रीमद्भागवत कथा कहना प्रारम्भ किया तो सबको आश्चर्य में डाल दिया । आज भारतवर्ष के प्रत्येक क्षेत्र में लोककल्याण का वास्तविक मार्ग दिखाती हुयी सबको धन्य कर रही हैं । निःस्पृहता का संदेश सारे संसार को देती हैं । कहती हैं कि धर्म के लिए भी धन का संग्रह नहीं करना चाहिए । ऐसा वे करके दिखाती हैं । कथा करती हैं परन्तु धनेच्छा से नहीं । कभी कहीं माँगती नहीं हैं । माँगती क्या, वे तो स्पर्श तक नहीं करती । अल्पायु में समस्त ब्रजभूमि का अनुसंधानात्मक अध्ययन कर ब्रज के दिव्य स्थलों का बड़ा ही मार्मिक वर्णन ब्रजसाध्वी मुरलिका ने स्वरचित ८१८ पृष्ठ के वृहद्ग्रन्थ "रसीली ब्रजयात्रा" में किया है जो किसी सामान्य जनमानस के सामर्थ्य की बात नहीं थी । लीलास्थलों की गूढ़ कथाओं को उन्होंने प्रकाशित कर ब्रजवासियों का बड़ा ही हित किया है । इसके अतिरिक्त इतना ही बड़ा उसका दूसरा भाग भी उन्होंने लिखा है । जिसमें ब्रज की वाह्य सीमा का चित्रण किया गया है । साथ ही जो आज संकीर्ण लोगों ने ब्रज को सीमित कर उसका अंग-भंग सा कर दिया है उसके वास्तविक स्वरूप को पुनः स्थापित करने का उनका प्रयास है । ब्रज पूर्व में अलीगढ़, पश्चिम में पहाड़ी झिरका फिरोजपुर, उत्तर में गुडगाँव और दक्षिण में वटेश्वर व ग्वालियर की सीमाओं को समेटे हुए है । सप्रमाण यह सब विषय द्वितीय भाग का अंश है । अपनी मधुरतम वाणी से मुरलिका के आकर्षणवत् समस्त जगत को प्रकाशित करने की क्षमता वाली साध्वी मुरलिका ने चाहे संगीत का क्षेत्र हो अथवा विद्वता का या वाणी का गाम्भीर्य, अपनी प्रतिभा से सिद्ध कर दिया है कि वे कोई सामान्य बालिका नहीं अपितु अलौकिक बालिका हैं ।

‘प्रमाद’ से बचना ही वास्तविक भजन

श्रीबाबामहाराज के प्रातःकालीन सत्संग (१२ जून २०१२) से संग्रहीत

भजन क्या है ? इसका उल्लेख श्रीभगवान् ने गीताजी में किया है –

सङ्कल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥
शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया ।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥
यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता ६/२४,२५,२६)

कुछ लोग कहते हैं कि हमने इतनी देर पाठ किया, जप किया, इतनी देर स्तुति किया लेकिन वह भजन नहीं है, वह तो नियम पूर्ति है । वास्तविक भजन वह है जो २४ घंटे चलता है । गीता (६/२६) में भगवान् कहते हैं कि २४ घंटे मन पर नजर रखो । मन का स्वभाव है बार-बार बाहर निकलने का, क्योंकि ये बहुत ज्यादा चंचल है, सदा चलता रहता है, बैठ नहीं सकता, कभी स्थिर नहीं रहता । सो जाओ तो मन सपने में भी स्थिर नहीं होता । अपने मन को देखो, बाहर कहाँ जा रहा है ? लड्डू-पेड़ा में या भोगों में अथवा किसी की याद में । मन विषयों में जाता है या जहाँ उसका लगाव (आसक्ति, राग) होता है, वहाँ चला जाता है । जहाँ-जहाँ जाता है, वहाँ-वहाँ जाने से इसे रोको, बस यही भजन है । इस प्रकार मन को अपने वश में ले आओ तब उसकी चंचलता (अस्थिरता) मिटेगी । जो लोग सोचते हैं कि हमने १ घंटा पाठ कर लिया, बस भजन हो गया लेकिन वह भजन नहीं है । एक घंटा पाठ किया फिर गप्प मारने लगे, यह भजन नहीं है । एक क्षण भी मन को इधर-उधर नहीं जाने देना चाहिए, न अपना और न दूसरे का । हमारा समाज तेजहीन क्यों है ? इसका कारण है कि लोग थोड़ी देर नियम करते हैं फिर चिलम, भंडारा और गपशप आदि में लग जाते हैं, ये भजन नहीं है । केवल कपड़े बदल लिए, साधु-वैष्णव वेष धारण कर लिया और मन अन्तर्मुख नहीं है, तो इससे आत्म कल्याण नहीं होगा । इसलिए श्रीकबीरदासजी महाराज ने कहा है –

मन न रंगाये रंगाये जोगी कपड़ा ।
कनवा फड़ैले बाला लटकैले,
डढ़िया बढ़ैले जोगी होइ गये बकरा ॥
मथवा मुड़ैले कपड़ा रंगैले,
गीता बांच जोगी होइ गैले लफड़ा ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो,
जम तर बचवा बधिक जैहे पकड़ा ॥

जोगी बन गए, कपड़ा रंगा लिया और मन नहीं रंगाया तो वह वास्तविक साधु नहीं है । कपड़ा रंगा लिया और दाढी बढ़ाकर बकरा बन गए । साधु लोग या तो सिर घुटा लेते हैं या जटा रख लेते हैं लेकिन मन नहीं रंगाते हैं (मन से भगवान् का सतत् स्मरण नहीं करते हैं) । कभी ऊँचे सिंहासन पर बैठकर गीता पर प्रवचन देते हैं लेकिन बहुत भाषण देने वाले बहिर्मुखी को योगी नहीं कहते हैं क्योंकि उसका मन अभी सच्चे साधन में नहीं रंगा है । मन २४ घंटे संसार में रहता है, इसे वहाँ से हटाकर भगवान् में लगाओ । न तो स्वयं प्रमाद करो और न दूसरे को करने दो । ‘प्रमाद’ जीव को नष्ट कर देता है । किसी भी बच्चे पर यदि दया करते हो तो उसे प्यार से सेवा में लगाओ अथवा कीर्तन कराओ । इस सन्दर्भ में मानमंदिर की साध्वियों ने बहुत अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है, उनके आश्रय में रहने वाली समस्त बच्चियाँ सेवापरायण हैं । छोटा हो अथवा बड़ा हो, भगवान् ने किसी को व्यर्थ समय नष्ट करने की अनुमति नहीं दी है । साधुओं को अगर किसी बात पर टोको तो बुरा मानते हैं क्योंकि उनमें ‘अहम्’ होता है । ‘साधु’ माने जो हर समय साधन करता है, एक क्षण भी व्यर्थ बात नहीं करता, वह है साधु । प्राय: साधु-समाज में आलसी लोग घुस आते हैं, बैठे-बैठे रोटियाँ तोड़ते हैं और साधन कुछ नहीं करते, इसलिए स्वयं को पतन से बचाने के लिए उनके पास से पृथक कर लेना चाहिए क्योंकि प्रमाद छुआछूत की बीमारी है, एक प्रमादी बहुतों को प्रमादी बना देता है । वृद्ध होने का यह मतलब नहीं है कि व्यर्थ बातें करो, वृद्धावस्था में सेवा नहीं कर सकते हो तो माला करो,

छोटी झांझ से कीर्तन करो । किसी को भी प्रमाद करने से भगवान् ने मना किया है ।

भयं प्रमत्तस्य वनेष्वपि स्याद्
यतः स आस्ते सहषट्सपत्नः ।
जितेन्द्रियस्यात्मरतेर्बुधस्य
गृहाश्रमः किं नु करोत्यवद्यम् ॥ (श्रीमद्भागवत ५/१/१७)

जिसके अन्दर प्रमाद है, उसके ६ कामादि शत्रु हमेशा बने रहते हैं, न उसका काम हटेगा, न क्रोध । प्रायः वृद्ध होने पर भी लोग भजन नहीं करते, वृद्ध स्त्रियाँ बहुत बात करती हैं, यह प्रमाद है । श्रीमद्भागवत में कथा है कि प्रियव्रतजी साधु बनना चाहते थे, नारदजी भी उन्हें साधु बनाना चाहते थे लेकिन ब्रह्माजी उन्हें कर्मयोगी बनाना चाहते थे । पिता-पुत्र में खेंचातानी हो गई । ब्रह्माजी ने स्पष्ट रूप से कहा कि मनुष्य साधु भी बन जाए किन्तु यदि प्रमादी है तो उसका नाश हो जाएगा । यहाँ-वहाँ व्यर्थ बात करेगा, निंदा करेगा और राग-द्वेष में फँसकर अपना जीवन भी नष्ट करेगा और दूसरों का भी । जंगल जाने से क्या लाभ, साधु बनने से क्या हित होगा ? प्रमाद है तो सदा भय है । अनेक जंगलों में गये लेकिन भीतर प्रमाद है तो तुम्हें भय है, माया खा जाएगी । तुम साधु बनने के बाद भी नष्ट होने से बच नहीं पाओगे ।

सर्वप्रथम जब हम बरसाना आये तो हमसे किसी सिद्ध संत ने कहा था कि साधु-संग नहीं करना । हमें आश्चर्य लगा कि बिना साधु-संग के भक्ति कैसे मिलेगी ? वह महात्माजी बोले - बेटा ! पढ़ने-सुनने की बात अलग है, हम भी अनुभव की बात बता रहे हैं । साधुओं का संग मत करना अन्यथा नष्ट हो जाओगे क्योंकि प्रायः अब वे साधु नहीं रहे जो हर समय साधन करते थे । ज्यादातर आजकल के साधु तो कहाँ बढ़िया पंगत हो रही है, कहाँ अच्छी दक्षिणा मिल रही है, बस इसी तलाश में घूमते-रहते हैं, उनके साथ रहने से तुम पेटू बन जाओगे, अभी तो तुम वैराग्य से मधुकरी माँग के खाते हो । साधुओं के पास गए तो सच में हमने देखा कि कहीं भी भगवच्चर्चा नहीं है, हर जगह निंदा है । राग-द्वेष का ही वातावरण मिला तो हमने उनके पास जाना छोड़ दिया । आज तक हम किसी स्थान में नहीं गए । बात जब अनुभव में आ गयी तो समझ में आया कि वे महापुरुष ठीक कहते थे । इसलिए जहाँ भी प्रमाद है तो वहाँ ६ शत्रु काम, क्रोध आदि हमेशा पास बैठे रहेंगे । जो प्रमादी है, चाहे वह पढ़ा-लिखा हो, चाहे साधु हो, यदि उसमें प्रमाद है तो ६ अवगुण काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य अवश्य होंगें, इनमें से एक भी दोष आया तो नष्ट कर देगा । जिसमें प्रमाद नहीं तो वह जितेन्द्रिय है । भगवान् में विशुद्ध प्रेम व विशुद्ध ज्ञान (विवेक) है तो उस मनुष्य को गृहस्थ-जीवन भी नुक्सान नहीं करेगा, स्त्री भी आयेगी तो वह भी भजन करेगी । सब भजन करेंगे, समय नष्ट नहीं करेगें, उसका गृहस्थाश्रम भी साधु से अच्छा है । एक प्रमादी साधु सैकड़ों को चिलम, भोग, गप्प, निंदा, राग और द्वेष में फ ँसाता है । प्रमाद जीवन को नष्ट कर देता है । इसलिए ब्रह्माजी ने नारदजी से कहा कि प्रमाद हटाओ, प्रमादविहीन गृहस्थी भी साधु से अच्छा है, उसे गृहस्थाश्रम नुक्सान नहीं करेगा । मनुष्य को सतत् साधनशील का ही संग करना चाहिए, ऐसा संग करना चाहिए जिससे प्रमाद नष्ट हो, चाहे वह साधु हो अथवा गृहस्थ । बेकार बैठने वाले के पास कभी मत बैठो । श्रीकबीरदासजी ने कहा है - "**बीत गए दिन भजन बिना रे । बाल अवस्था खेल गँवायो, जब जवान तब मान घना रे ॥**" कौमारावस्था से ही भक्ति करनी चाहिये । बचपन खेलने की आयु नहीं है, प्रमाद के लिए जीवन नहीं है । जो भी प्रमादी होते हैं, उनके पास रहने वाले भी आलसी हो जाते हैं । श्रीमानमंदिर, गुरुकुल के बालाराधक (बाल विद्यार्थी) प्रतिदिन ब्रह्ममुहूर्त में जागकर श्रीराधारानी मन्दिर की मंगला आरती का दर्शन करते हुए नगर-कीर्तन के साथ बरसाने की परिक्रमा लगाते हैं । दुनिया में कहीं ऐसा बच्चो ं का समुदाय नहीं है । जिसके पास रहने से प्रमाद आये, चाहे वह महात्मा है, उसका संग कभी नहीं करना चाहिए । हजारों जंगलों में घूम आओ, विरक्त बनने के बाद भी यदि तुम्हारे अन्दर प्रमाद है तो नष्ट हो जाओगे । मनुष्य में प्रमाद आया और वह नष्ट हुआ । जैसे - सर्प चूहा खा जाता है, वैसे ही प्रमाद शरीर को या उम्र को खा जाता है । न प्रमाद स्वयं करना चाहिए और न पास वाले को प्रमादी बनाना चाहिए । श्रीमानमंदिर के सतत् साधनरत बच्चे एक आवाज में ब्रह्ममुहूर्त में जग जाते हैं, इसका कारण यही है कि सब कर्मशील हैं, सबेरे से शाम तक समय नहीं कि खेलने जाएँ, ऊधम करें । भगवान्

कहते हैं कि चौबीस घंटे साधन करना चाहिए । चंचल मन इधर-उधर जाता रहता है, उसे रोको, यही सच्चा भजन है ।

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् । उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता ६/२७)

जिसका मन शांत होगा, उसी योगी को उत्तम सुख मिलेगा क्योंकि उसका रजोगुण शांत हो गया है, कल्मष नहीं रहा मन में, आलस्य नहीं है । ये कब हुआ, जब उसने ऐसा सतत् साधन किया । जैसे ही एक क्षण को भी मन बाहर निकले तो उसे पटक लगाओ, एक क्षण को भी छुट्टी नहीं दो, यदि दया करोगे तो मन तुम्हें नष्ट कर देगा । मन बड़ा चंचल है, स्थिर नहीं रहेगा, ये हमें मार डालता है । ऋषभदेवजी के प्रसंग में शुकदेवजी कहते हैं -

नित्यं ददाति कामस्य च्छिद्रं तमनु येऽरयः ।
योगिनः कृतमैत्रस्य पत्युर्जायेव पुंश्चली ॥

(श्रीमद्भागवत ०५/०६/०४)

जो पुंश्चली स्त्री होती है वह बदमाशों से मिलकर अपने पति को मरवा देती है, इसी प्रकार मन विषय-वासनाओं को अवसर देकर ६ शत्रु काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, मत्सर के द्वारा प्रमादी जीव को नष्ट-भ्रष्ट (पतन) करा देता है । कल्याणपुर नामक गाँव में एक धनी व्यक्ति रहते थे, उनकी स्त्री पुंश्चली थी, उसने पति के साथ धोखा किया । रात को उसने किवाड़ खोल दिया तथा सात-आठ उसके प्रेमी बदमाश घुसे, उन्होंने उसके पति को पहले खाट में रस्सी में बाँध दिया, उसके पति अत्यंत पुष्ट पहलवान थे, बदमाशों ने बीसों रस्सियों की गाँठ लगा दिया, उसके बाद उनके एक-एक अंग को काटा और तड़पा-तड़पा के मारा । पुंश्चली के कारण उनका जीवन नष्ट हो गया । किसी को तड़पा के मारो तो कितना कष्ट होगा, वैसे ही हमारा मन है, यह जीवन भर हमें तड़पा-तड़पा के मारता है, बुरे कर्मों में ले जाता है । काम, क्रोध, लोभ आदि शत्रु जीव को लूट लेते हैं । एक शत्रु नहीं, बहुत से शत्रु हैं । जैसे पुंश्चली पर उसके पति ने विश्वास किया तो उसने रात को किवाड़ खोल दिया, बदमाश घुस आये और पुरुष को घोर यातनाएँ देके मारा, वैसे ही हमारा मन है, हम अपने मन से मित्रता करते हैं, उसकी बात मानते हैं, संत-महापुरुषों के उपदेश की बात नहीं मानते हैं तो उसका परिणाम यह होता है कि पुंश्चली स्त्री की तरह मन हमें मरवा डालता है । जीव कष्ट पाता है, कितने 'गलत कर्म' मन करवाता है लेकिन हम समझ नहीं पाते । इसलिए जब तुम्हारा मन शांत होगा तभी तुम्हें उत्तम सुख मिलेगा और रजोगुण समाप्त होगा, तब तुम ब्रह्मस्वरूप होगे । उस समय जरा भी गंदगी नहीं रहेगी । जितनी गंदगियाँ आती हैं, उन्हें मन ही लाता है ।

बरसाने चल खेलैं होरी ॥
पर्वत पे वृषभानु महल है,
जहाँ बसे राधा गोरी ।
चोबा चन्दन अतर अरगजा,
केशर गागर भर घोरी ।
उतते आये कुंवर कन्हैया,
इत ते राधा गोरी ।
सूरदास प्रभु तिहारे मिलन कूं,
चिरजीवो मंगल जोरी ।

आज बिरज में होरी रे रसिया ॥
उतते आये कुंवर कन्हैया,
इतते राधा गोरी रे रसिया ।
उड़त गुलाल अबीर कुमकुमा,
केशर गागर ढोरी रे रसिया ।
बाजत ताल मृदंग बांसुरी,
और नगारे कि जोरी रे रसिया ।
कृष्णजीवन लच्छीराम के प्रभु सौं,
फगुवा लियौ भर झोरी रे रसिया ।

सेवा-प्रवृत्ति से सहज भोग-निवृत्ति

(श्रीबाबामहाराज के संध्याकालीन सत्संग (१२ जून, २०१२) से संग्रहीत)

सेवा करने वाले बहुत आसानी से भगवान् को प्राप्त कर लेते हैं और उन्हें भक्ति की प्राप्ति हो जाती है । कठिन साधन योग, यज्ञ आदि करने वालों को परिश्रम होता है । हमारे यहाँ छोटे-छोटे बच्चे सेवा करते हैं, इनको जो वस्तु मिलेगी, वह कठिन साधन करने वाले योगी, यती-तपी को नहीं मिलेगी, चाहे कितने बड़े विरक्त बन जाओ । भक्तिमयी सेवा (कथा-कीर्तन) से भगवान् की जितनी जल्दी प्राप्ति होती है, उतनी किसी अन्य साधन से नहीं होती है । इस सत्य सिद्धांत का श्रीमद्भागवत में निरूपण किया गया है –

पानेन ते देव कथासुधायाः प्रवृद्धभक्त्या विशदाशया ये ।
वैराग्यसारं प्रतिलभ्य बोधं यथाञ्जसान्वीयुरकुण्ठधिष्ण्यम् ॥
तथापरे चात्मसमाधियोगबलेन जित्वा प्रकृतिं बलिष्ठाम् ।
त्वामेव धीराः पुरुषं विशन्ति तेषां श्रमः स्यान्न तु सेवया ते ॥

(श्रीमद्भागवत ३/५/४५, ४६)

किन्तु निष्काम सेवा सब नहीं कर सकते क्योंकि सेवा में 'अहम्' बहुत जल्दी छोड़ना पड़ता है । अहम् नाश के बिना सेवा नहीं होती है । हम लोग जिनमें अहम् है वे सेवा नहीं कर सकते । विशुद्ध भक्ति (कथा-कीर्तन) का दान करना सबसे बड़ी सेवा है, इसे दान करने वालों को ब्रजगोपीजनों ने सबसे बड़ा भूरिद (दाता) कहा है –

तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम् ।
श्रवणमङ्गलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः ॥

(श्रीमद्भागवत १०/३१/९)

राजा परीक्षित ने भी कहा है कि जो लोग श्रद्धा से कथा सुनते हैं, भगवान् स्वयं उनके हृदय में प्रवेश कर जाते हैं । जैसे - क्वार-कार्तिक में बरसात का गंदा जल शुद्ध हो जाता है, वैसे ही भगवान् के प्रवेश करने से मन शुद्ध हो जाता है ।

शृण्वतः श्रद्धया नित्यं गृणतश्च स्वचेष्टितम् ।
कालेन नातिदीर्घेण भगवान् विशते हृदि ॥
प्रविष्टः कर्णरन्ध्रेण स्वानां भावसरोरुहम् ।
धुनोति शमलं कृष्णः सलिलस्य यथा शरत् ॥

(श्रीमद्भागवत २/८/४,५)

वल्लभ संप्रदाय की वैष्णववार्ता में कथा है कि जब गोस्वामी विट्ठलनाथजी नित्यलीला गमन कर गए, तब उनके सात पुत्रों में से कुछ ने यज्ञ करने का विचार किया तो गोविन्दस्वामीजी की बहन कान्हाबाई (जो वरिष्ठ भक्त थीं) ने मना कर दिया और कहा कि भगवान् की सेवा सबसे बड़ा यज्ञ है, उसको छोड़कर के ये सब क्यों कर रहे हो, क्या आवश्यकता है सेवा छोड़ कर यज्ञ आदि साधन करने की ?

यही बात ब्रह्माजी ने भागवतजी में कही है कि भगवान् सेवा से जल्दी मिलते हैं । ज्ञान, वैराग्य आदि कठिन साधनों से नहीं मिलते हैं । भगवान् की सेवा आनन्दप्रद है, जिसमें संसारियों की तरह परिश्रम (मेहनत) की अनुभूति नहीं होती है, अन्य क्लिष्ट साधनों में कष्ट, क्लेश होता है । विशुद्ध भक्ति का मार्ग यही है कि सेवा की जाये । वल्लभ सम्प्रदाय में एक कथा आती है कि एक भक्त थे, वह गौ-सेवा करते थे । गौ-सेवा में वह इतना तल्लीन हो जाते थे कि पंगत-स्थल से प्रसाद की पत्तल लेने भी नहीं जाते थे तो स्वयं श्रीनाथ जी उनके पीछे-पीछे लड्डू लेकर घूमते थे । लोग बड़े-बड़े साधन करते हैं परन्तु सेवा से भगवान् जितना प्रसन्न होते हैं उतना कठोर साधन योग, यज्ञ और तप करने वालों से नहीं होते हैं (भागवत ३/५/४६) । ये बड़े महत्त्व की बात है कि छोटे-छोटे बच्चे भी मानमंदिर में सेवारत हैं । ये जप, तप और यज्ञ करने वालों से बहुत आगे चले गए । इनकी सेवा का महत्त्व समझना बहुत कठिन है । नामदेवजी को बचपन में ही भगवान् मिल गए थे । जप, तप आदि कठोर साधन करने वालों को भगवान् नहीं मिलते हैं । नामदेवजी की बचपन की कथा है कि उन्होंने बड़े प्रेम से भगवान् को दूध का भोग लगाया था । प्रेम की सेवा से ही भगवान् प्रसन्न होते हैं । यदि बालक भी सेवापरायण होते हैं तो भगवान् उनसे ज्यादा खुश होते हैं, सारा दिन जप, तप आदि करने वालों से नहीं होते । पूजा आदि करते रहो उससे कुछ नहीं होगा, व्रत करो उससे भी कुछ नहीं होगा । नामदेव जी की निष्कपट मन व सरल-सहज स्वभाव से की गई प्रेममयी सेवा से भगवान् प्रसन्न हुए और उनके द्वारा अर्पित दूध को पिया । उन्हीं के कारण उनके नाना को भी भगवद्-दर्शन हुए । हमें विश्वास है कि सेवापरायण साधकों से भगवान् अति शीघ्र प्रसन्न होते हैं । हमारे यहाँ

छोटे-छोटे बच्चे सेवा करते हैं । रामायण में देवराज इन्द्र को देवगुरु ब्रहस्पतिजी ने कहा - **राम सदा सेवक रुचि राखी । बेद पुरान साधु सुर साखी ॥**

सुनु सुरेस उपदेसु हमारा । रामहि सेवकु परम पिआरा ॥

(श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड – २१९)

भगवान् को सेवक इतना प्यारा है कि 'मानत सुख सेवक सेवकाई ।' भगवान् अपनी सेवा से प्रसन्न नहीं होते, सेवकों की सेवा से प्रसन्न होते हैं । भक्तों की सेवा ही भक्ति का सार है । सेवा सबसे बड़ी चीज है । सब लोग सेवा ही करो; जप, तप आदि साधन से कुछ नहीं होगा । श्रीमानमंदिर में दिन-रात भगवन्नाम- कीर्तन होता है । यहाँ सबका एक-एक क्षण हरिनाम में जा रहा है, कारण क्या है ? इसका कारण है - **सेवा** । सेवा ऐसी चीज है, जिसके आगे सब साधन व्यर्थ हैं । अत: सबका सार यही है कि बिना भक्तिमय सेवा के आत्यंतिक क्षेम नहीं होता है । इसलिए मनुष्य को सब संदेह छोड़ कर सेवा करनी चाहिए ।

"कृष्णसेवा सदा कार्या मानसी सा परामता ।"

(श्रीवल्लभाचार्यजी)

कृष्ण-सेवा जीव का परम धर्म है । न योग, न यज्ञ और न जप परम धर्म है । यदि मानसी-सेवा हो जाए तो सबसे ऊँची बात है । मानसी-सेवा सरल नहीं है । मानसी-सेवा का तात्पर्य है कि चित्त भी पिघलकर सेवा में तन्मय हो जाए । पिघलना क्या है ? मन द्रवीभूत होकर भगवद्सेवा-रस में डूब जाय ।

दरसन दै निकसि अटा में ते ॥
लट सरकाय दरस दै प्यारी,
निकस्यो चंद घटा में ते ।
कोटि रमा सावित्री भवानी,
निकसी चरन छटा में ते ।
पुरषोत्तम प्रभु यह रस चाख्यो,
माखन कढ़यो मठा में ते ।

दरसन दै नन्द दुलारे ॥
मोर मुकुट कानन में कुंडल,
होठन बंसीवारे ।
हाथ लकुट कम्मर की खोई
गौअन के रखवारे ।
चन्द्र सखी भज बाल कृष्ण
छवि, जीवन प्राण हमारे ।

नहिं ऐसो जनम बार-बार

भागवत के एकादश स्कंध में भगवान् ने यही कहा था – ऊद्धव ! '**लब्ध्वा सुदुर्लभमिदं बहुसम्भवान्ते मानुष्यमर्थदमनित्यमपीह धीरः । तूर्णं यतेत न पतेदनुमृत्यु यावन्निः श्रेयसाय विषयः खलु सर्वतः स्यात् ॥**

(श्रीभागवतजी ११/०९/२९)

यह मनुष्य शरीर विषयों के लिए नहीं मिला है, कल्याण के लिए मिला है । विषय भोग तो चौरासी लाख योनियों में कुत्ते, बिल्ली, गधे सभी भोगते हैं । ऐसे शरीर को पाकर के जो दुर्लभ नहीं, सुदुर्लभ - बहुत दुर्लभ है, देवताओं को भी नहीं मिलता, अरबों जन्मो के बाद मिलता है लेकिन ये थोड़ी देर के बाद मिला है बस । दिन-रात प्रयत्न करो, जब तक मृत्यु नहीं आती है, उसके बाद कुछ नहीं कर पाओगे । इसलिए शरीर को विषयों से बचा करके कल्याण की ओर ले जाओ, यही श्रीमीराबाईजी कह रही हैं - '**नहिं ऐसो जनम बार-बार**' जैसे भगवान् का अवतार होता है वैसे हीजीव के लिए उसको अवतार जैसा यह मनुष्य शरीर मिला है ।'**न जानू कहा पुण्य प्रगटे**' हम लोग सोचते नहीं यह शरीर जा रहा है । इसके जाने के बाद क्या होगा, कोई नहीं सोचता 'मानुषा अवतार' यह मनुष्य अवतार हुआ है । जागो ! हर समय भगवान की ओर चलो ।

लोग सोचते हैं, बच्चा बड़ा हो रहा है, बड़ा नहीं काल की ओर जा रहा है, आयु घट रही है परन्तु जीव सोचता नहीं कि इस मानव शरीर के बाद क्या होगा ? **'बढ़त छिन-छिन घटत पल-पल'** एक-एक क्षण घट रहा है उम्र का, हम मौत के किनारे जा रहे हैं । इसलिए सब संसार छोडो । मीरा कहती हैं - सोचो, जब शरीर मिटेगा, तीन लोक का राज्य घूस में देकर भी तुम एक पल भी आयु नहीं बढा पाओगे, एक फूंक (अंतिम समय की प्राणवायु) चली जायेगी, बस देर नहीं लगेगी । **'जात न लागै बार'** वल्लभकुल में एक वार्ता आती है कि सिद्ध पुरुष लोग कैसे ज्ञान कराते हैं ? गुरुजी ने अपने शिष्य को एक पटुका दिया । वह पटुका पहनकर जब बाजार में चला तो हर आदमी का पिछला जन्म उन्हें दिखाई देने लगा । कोई ऊँट था, कोई गधा था, कोई सर्प था, कोई उल्लू था, कोई तोता था, कोई मैना था तो कोई गिलहरी था । घबराकर उन्होंने उस पटका को उतार दिया, बोले कि क्या है; ये क्या देख रहा हूँ मैं । अपने घर में जब गये और उसको पहनकर देखा अपनी स्त्री को तो वह कुतिया थी । घबराकर पटका उतार दिया और बोले यह क्या है, यानि उनकी स्त्री पूर्व जन्म में कुतिया थी, फिर उनकी स्त्री ने पटका को छीनकर पहना तो उनका पति भालू दिखाई पड़ा । उनको ज्ञान हो गया को जितने भी हमलोग मनुष्य हैं, ये सब जाने किस-किस योनि से गधे, कुत्ते, बिल्ली बनकर आये हैं लेकिन मनुष्य शरीर को पाकर उन्हीं भोगो में लग गए इसलिए मीरा जी कहती हैं "जागो"

हे दीनबंधु ! कृपा करो, संसार के अन्धकार से, विषयों से बचाकर अपनी ओर लगा दो । आयु घट रही है, नष्ट हो रही है । "बढ़त छिन-छिन घटत पल-पल" एक फूंक जाएगा, बस उसी में 'जात ना लागे बार' जैसे पेड़ से कोई पत्ता टूटकर गिरता है फिर कभी पेड़ में नहीं लग पाता, उसी तरह से जिस परिवार से जो चला गया माता-पिता, स्त्री-पति, उससे फिर कभी भेट नहीं होती । अपना कुछ नहीं है, केवल प्रभु है लेकिन मनुष्य इस माया में भूल जाता है । **'वृक्ष के ज्यों पात टूटे'** कोई पत्ता पेड़ से टूटकर क्या कभी जुड़ा है, कभी नहीं जुड़ सकता, उसी तरह से कोई व्यक्ति परिवार से अलग होकर के मरने के बाद कभी नहीं मिला है, कभी नहीं मिलेगा, कभी नहीं मिल सकता । अपना कोई नहीं है ,अपना जो है उसे हम भूल गए है । वो है श्याम **'वृक्ष के ज्यों पात टूटे, फिर न लागे डार'** उस डाल में पत्ता फिर कभी नहीं जुडेगा, उसी तरह से उस परिवार को जिसने अपना समझा उसमे कभी नहीं आएगा । हे दीनबन्धु ! यह शरीर तो दिया, इस शरीर को अपनी ओर लगा लो । यह भवसागर है, यह आकाश में भी है, पटल में भी है । देवता भी डूब रहे है, दानव भी डूब रहे है । हम सब डूब रहे है, बचो! इस शरीर के जाने के बाद फिर तुम कभी नहीं बच पाओगे ।

'भव सागर अति जोर कहिये' यह अनंत है, ये ऊपर के जितने लोक दिखाई पड रहे है, सब समुद्र में डूब रहे है । इसकी ऊंचाई अनंत है ।

'अनंत ऊँची धार' गोस्वामी जी ने कहा है - यह संसार अनंत है, जैसे गूलर का पेड़ किसी ने देखा होगा, उसमे लाखो फल होते है । उस एक फल को तोड़ो तो उसमे हजारों कीड़े है, उसी में उड़ते है, कूदते खेलते है । उसी तरह यह ब्रम्हांड है । हम लोग इसमें बंद है । जैसे गुलर में कीड़े बंद रहते है उसी में पैदा होते है, उसी में बाद होते है, उसी में जवान होते है ,बूढे होते है, उसी में मर जाते हैं । उस गुलर के बाहर उनको यह पता नहीं कि कितनी बड़ी दुनिया है, उसी तरह ब्रम्हांड में हम लोग बंद हैं । कीड़े की तरह हँसते, खेलते भोग भोगते है लेकिन इससे छूटने की कोशिश नहीं करते है क्योंकि अज्ञान से बंधन पसंद है । यह भवसागर अनंत है, इससे बचो भाई । यह भवसागर अनंत है, तुम तो एक छोटे-से परिवार में कैसे मर रहे हो, मेरा घर-मेरा घर; ये सब छोड़ो, ये सब छोड़कर भगवान् के नाम से प्यार करो । चलो निकलो, जीवन भगवान् के लिए है, नहीं तो फिर कभी तुम नहीं छूट पाओगे ।

'राम नाम का बाँध बेड़ा' लठे की नाव बनाओ, उसको बेड़ा कहते हैं । भगवान् के नाम में जीवन लगा दो, हटा दो मोह 'माया और विषयों' से ।

'उतर परली पार' यह जीवन जा रहा है, इसमें पार लग गए तो लग गए नहीं तो फिर सदा डूबते रहोगे । जागो, जागो - मीरा कह रहीं है । जैसे कोई जुआड़ी जुआ खेलता है, जीत जाता है, वैसे ही यह मनुष्य शरीर भी एक जुआ है । हर आदमी हार कर जाता है ,जन्म को भोगो में गवां कर जाता है । संसार की मोह- ममता में ऐसे ही मर जाता है फिर दुबारा शरीर मिलता नहीं है । हार कर जाता है ।

मीरा जी कहती - तुम जीतना सीखो । **'ज्ञान चौसर मण्डी चौहटे'** ज्ञान का पासा चौसर कहते है जिस पर गोट खेली जाती है, उसके चार कोने होते है । उसमे ज्ञान के चौसर को फैलाकर चौहट्टे की मण्डी पर बैठ करके चार मार्ग है - ज्ञान, भक्ति , कर्म और योग **'सुरन पासा सार'** प्रेम का पासा फैला दो , केवल भगवान् में प्रेम मिल जाए बस यही रास्ता है जीतने का , नहीं तो इस दुनिया में हर आदमी हार कर गया । सुहृद माने प्रेम , श्याम सुंदर से प्रेम का पासा लगाओ और देखो , तुम जीत जाओगे और नहीं तो , मर कर हार करा चले जाओगे अँधेरे में ।

'या दुनिया में रची बाजी' मीराजी कहतीं है- मैं देखती हूँ कि हर आदमी हार कर जा रहा है । हर आदमी जो मरता है , वह बाजी हार कर जाता है । अँधेरे में जाता है , चौरासी लाख योनियों में जाता है । कोई भी जीत के नहीं जा रहा है । यही कबीर जी ने भी कहा-

कहत कबीर सुनो भइ साधो, पार उतर गए संत जना रे ।

केवल भगवान् के भक्त संत पार गए बाकी हर आदमी हार कर गया , डूबके गया सदा के लिए चला गया ।

'या दुनिया में रची बाजी' बोलो तुम क्या चाहते हो, जीतना चाहते हो कि हारना चाहते हो - मीरा कह रही है – **'जीत भावे हार'** बोलो क्या चाहते हो ? हए मनुष्यों, उठो उठो । बाजी को जीत कर जाओ, हार कर मत मरो, प्रभु से मिलो । हे गोविन्द ! तू मुझे हारने मत दे , दया करदे अपनी । मीरा जी कहती हैं - वेद पुराण सब जगह साधु - संत महन्त यही कह रहे है , पुकार -पुकार के, कि ये शरीर फिर नहीं मिलेगा , उठो, भगवान् की प्राप्ति करो । लेकिन हर मनुष्य हार कर जाता है , हार कर मरता है । माया पटक देती है । चिल्ला रहे है महत्मा लोग **'साधु संत महंत ग्यानी, कहत पुकार-पुकार'** पुकार कर कहते है, वेदों ने यही कहा था **उत्तिष्ठ, जाग्रत** – 'उठो जागो, **प्राप्य वरान्निबोधत'** चलो श्रेष्ट महापुरुषों के पास , वहाँ बोध ज्ञान - भक्ति प्राप्त करो, उठो चलो । **'क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया'** छुरे की धार पर चलना है । **'दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति'** बड़ा कठिन रास्ता है, भोग तुमको पटक देंगे अतः उठो,चलो जागो ।**'जागो अब जिन जागना जब लम्बे पाँव पसार'** जब लम्बे पाँव पसार कर मर जाओगे तब क्या जागोगे । साधु - संत पुकार कर कहते है । जागो, लेकिन हम बहरे हो गए है ।यह शरीर गया, फिर नहीं मिलेगा, उठो भाई ।**'दासी मीरा लाल गिरधर'** केवल गिरधर ही सत्य है, मीरा कहती है, वही मेरा पति है । माता-पिता सब कुछ है ।

गिरधर कन्त गिरधर धन म्हारो, माता-पिता वीर भाई ।
थे थारे मैं म्हारे राणाजी, यूँ कहे मीरा बाई ॥

लोग मीरा को समझाते थे, तू राजवंस की रानी है । कलंक लगता है ।मीरा कहती थी - मैं राजवंस अथवा किसी वंस का नहीं हूँ । लोगों ने पूछा क्यों, तू तो राठौरो की लड़की है । सबसे वीर राजपूतो की, मीरा बोली - नहीं मेरा सबकुछ गिरधर है, वही मेरा पति है, वही मेरा धन है । वही मेरा माँ है, वही मेरा पिता है, वही मेरा भाई है । तुम्हारा राजवंश परिवार, जाओ अपने परिवार में मान बढाओ, तुम जाओ । राणाजी मेरा तो एक यही सम्बन्ध है गिरधर से । **'दासी मीरा लाल गिरधर'** मैं उसी की दासी हूँ ।मेरा और कोई रिश्ता नहीं रहा और कोई सम्बन्ध नहीं रहा । दो दिन का जीवन है, क्यों संसार में मरते हो, क्यों मोह में अंधे होते है, क्यों भोगो में प्रभु को भूलते हो । केवल दो चार दिन ही तो जीना है । **'जीवणा दिन चार'** बस चार दिन जियागे, उसके लिए क्यों महल बनाते है । महल-दुमहल, पैसा - भोग । चले जाओग, याद रखो इसलिए उठो ।

'दासी मीरा लाल गिरधर जीवणा दिन-चार' अरे जैसे भगवान् का अवतार होता है वैसे ही तुम्हारा भी अवतार हुआ, भगवान् ने मनुष्य बना दिया, नहीं तो करोड़ों वर्ष तक मक्खी - मछर, कुत्ते बन्दर बनके आये है । हम लोग, इसलिए उठो । **'न जाने कहा पुण्य प्रगटे मानुषा अवतार'** भगवान् के अवतार की तरह इस शरीर की कीमत को, क्यों नष्ट करते हो ?

रसिया को नार बनावो री ॥

कटि लंहगा उर मांहि कंचुकी, चूनर सीस ओढ़ावो री ।
बांह भरा बाजूबंद सोहै, नथ बेसर पहिरावो री ।
गाल गुलाल नयन में कजरा, बेंदी भाल लगावो री ।
आरसी छल्ला औ खंगवारी, अनवट बिछुवा लावो री ।
नारायण तारी बजाय के, यशुमति निकट नचावो री ।

ऊँचा गाँव में श्रीराधाकृष्ण विवाह उत्सव का आयोजन हुआ, पूज्यश्री बाबा महाराज भी पहुंचे

श्री मानमंदिर

प्रस्तावित पुनरुद्धार रेखांकित चित्र

ACCOUNT NAME
SHRI MAAN BIHARI
LAL MANDIR SEVA
ACCOUNT NUMBER: 59109927338666
IFSC CODE: HDFC0000268
BANK: HDFC BANK LTD
BRANCH: BSA COLLEGE, MATHURA

मान मंदिर लीला स्थल श्रीराधाकृष्ण की लीला स्थलियों में सबसे प्रमुख है
इस अति विलक्षण लीला स्थली के पुरुद्धार कार्य में जुड़ कर धाम सेवा का दुर्लभ लाभ प्राप्त करें

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट, गह्वरवन, बरसाना (मथुरा)
www.maanmandir.org; संपर्क :9927338666

QR कोड

RNI REFERENCE NO. 1313397- REGISTRATION NO. UP BIL-2017/72945-TITLE CODE UP BIL-04953 POSTAL REGD.NO. 093/2024-2026
श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा गुप्ता ओफ़्सेट प्रिंटर्स A- 125/1 , wazipur industriyal area, new delhi- 52 से मुद्रित एवं मान मन्दिर सेवा संसथान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित **[AGRA/WPP-12/2024-2026 AT 31.12.26]**